ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 17 सितम्बर 2017

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 17 सितम्बर 2017 से 23 सितम्बर 2017

आश्विन कृ.– 12 ● वि० सं०–2074 ● वर्ष 58, अंक 89, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. सैक्टर-6 पंचकूला में श्रावणी के पावन उपलक्ष्य में वेदोपदेश

आर्य युवा समाज, महात्मा हंसराज पब्लिक स्कूल सैक्टर–6 पंचकूला (हरियाणा), के तत्त्वावधान में श्रावणी उपाकर्म के उपलक्ष्य में वेद सप्ताह का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में आर्य जगत् के युवा वैदिक विद्वान् आचार्य राजू वैज्ञानिक ने वेदों की महिमा को सरल ढंग से प्रस्तुत किया। आचार्य राजू वैज्ञानिक ने प्रथम दिवस मनुर्भव का पावन संदेश दिया और कहा मनुष्य बनने के लिए सत्य आचरण होना परम आवश्यक है।

द्वितीय दिवस धर्म के संबंध में चर्चा की और कहा जिन नियमों से संसार में सुख–शान्ति हो अपनी तथा दूसरों की उन्नति हो और सबका मंगलमय हो, उसे धर्म कहते हैं। तृतीय दिवस अपने उपदेश में आचार्य राजू वैज्ञानिक ने 'कर्म सिद्धान्त' पर अपना विचार प्रकट किए। उन्होंने कहा वैदिक सिद्धान्त कर्म सिद्धान्त पर आधारित है। जो व्यक्ति जैसा काम करेगा, उसे वैसा ही फल अवश्य भोगना पड़ता है।

चतुर्थ दिवस विद्यालय के समस्त अध्यापको सम्बोधित करते हुए आचार्य राजू वैज्ञानिक ने कहा सुख का पहला आधार शरीर है। शरीर के लिए आहार, व्यवहार और विचार तीनों का संगम है। उन्होंने मन के लिए सत्संग, स्वाध्याय और सेवा तीनों को अपनाने पर विशेष बल दिया। आत्मा के लिए दोनों समय सायं–प्रातः वैदिक सन्ध्या करना मनुष्य का परम लक्ष्य है।

आर्य युवा समाज की संरक्षिका प्राचार्या जया भारद्वाज ने आचार्य राजू वैज्ञानिक के सरलतम वेदोपदेश के लिए हृदय से आभार व्यक्त किया। शान्ति पाठ के साथ वेद सप्ताह की शृंखला समाप्त हुई। सभी उपस्थित आर्यजनों व विद्यालय के समस्त सदस्यों के लिए ऋषि लंगर की व्यवस्था थी।

एम.एल.खन्ना डी.ए.वी. द्वारका में हुआ 'हिंदी भाषा उत्सव' का आयोजन

विद्यार्थियों में हिंदी भाषा के प्रति प्रेम व भावनात्मक संबंधो की पुष्टि हेतु विद्यालय में विगत वर्षो की भांति इस वर्ष भी 'हिंदी भाषा उत्सव' का आयोजन किया गया,जिसमे प्रत्येक कक्षा के लिए विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। उत्सव का आरंभ विद्यालय की प्रधानाचार्या के कर कमलों द्वारा दीप प्रज्ज्वलन से हुआ। प्रथम दिन कक्षा तीसरी और चौथी के विद्यार्थियों द्वारा चरित्र चित्रण एवं नाट्य मंचन प्रतियोगिता की प्रस्तुति हुई। चरित्र चित्रण में छात्र–छात्राओं ने स्वयं को विभिन्न चरित्रों जैसे मिताली राज, सानिया मिर्जा, सचिन तेंदुलकर, भगत सिंह, सुभाष चन्द्र बोस, मदर टेरेसा, तो कल्पना चावला या किरण बेदी के रूप में प्रस्तुत किया । इन प्रतिभागियों की आकर्षक वेश भूषा के साथ–साथ बोलने का अंदाज भी अत्यंत उत्तम था। चौथी कक्षा के विद्यार्थियों द्वारा अति सुन्दर नाट्य मंचन प्रस्तुत किया गया जिसमें बाल मजदूरी प्रमुख विषय था।

दूसरे दिन पाँचवीं एवं छठी कक्षा के विद्यार्थियों की प्रतियोगिताएं थीं 'कल्पना की उड़ान' एवं कविता वाचन। पाँचवीं कक्षा के बच्चों की यह कल्पना की उड़ान तो बच्चों की उम्र से बहुत ऊँची थी। इन बच्चों ने स्वयं को हवा , पानी, नदी, गौरैया, क्रौंच पक्षी, समय, गाय, वृक्ष, पृथ्वी, ओजोन परत, बाघ, मोर, हाथी के रूप में प्रस्तुत किया। प्रस्तुति इतनी स्वाभाविक थीं लगता था मानो ये सभी स्वयं अपनी कहानी या व्यथा सुना रहे हों।

तीसरे दिन सातवीं कक्षा के विद्यार्थियों ने विज्ञापन मंचन एवं आठवीं कक्षा के विद्यार्थियों ने नुक्कड़ नाटक प्रस्तुत किया जिसमे सामाजिक जागरूकता के विषय जैसे स्वच्छता अभियान,शौचालय,बेटी बचाओ–बेटी पढ़ाओ,किसान की व्यथा प्रमुख थे।

उत्सव के अंतिम दिन नवीं एवं दसवीं के विद्यार्थियों की प्रस्तुति काव्य पाठ एवं काव्यमंचन थी जिसमें कविता अपने हाव–भाव से साकार हो उठी थी। काव्य मंचन तो भावों एवं शब्दों का अद्भुत संगम था। कार्यक्रम का समापन विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती मोनिका मेहन के संबोधन से हुआ जिसमे उन्होंने विजयी छात्र–छात्राओं को बधाई देते हुए उनमें अपनी भाषा के प्रति सम्मान जगाए रखने की प्रेरणा दी।

डी.ए.वी. स्कूल, फिल्लौर में वन महोत्सव परियोजना का आरंभ

डी.आर.वी. डी.ए.वी. शताब्दी पब्लिक स्कूल, फिल्लौर में वन महोत्सव परियोजना का शुभ आरंभ किया गया। इस अवसर पर आयोजित कार्यक्रम में नन्हें विद्यार्थियों ने नृत्य प्रस्तुति द्वारा वृक्षों की उपयोगिता को दर्शाया। वृक्षारोपण पर आधारित कविता पाठ किया गया। विद्यालय के चेयरमैन श्री एस.के. मल्होत्रा कार्यक्रम के मुख्य अतिथि थे। उन्होंने विद्यालय द्वारा वृक्ष लगाने की महत्ता बताई। उन्होंने कहा कि आज के विद्यायार्थी ही भविष्य के निर्माता हैं। इनके द्वारा वृक्षारोपण करना, वृक्षों की उपयोगिता को समझना बहुत आवश्यक है क्योंकि ये ही आने वाले कल के लिए स्वच्छ तथा सुरक्षित पर्यावरण को बनाने में सहायक होंगे।

विद्यालय के प्रधानाचार्य श्री योगेश गंभीर ने कहा कि विद्यालय का शुरुआती लक्ष्य दस हज़ार (10,000) पौधे लगाना है। पर प्रयास यह रहेगा कि यह सिलसिला यूँ ही चलता रहे तथा पौधारोपण की संख्या इतनी अधिक हो जाए कि गिनती की आवश्यकता ही न रहे। विद्यालय की ओर से आस–पास के गाँवों में पौधारोपण किया गया तथा उनकी देखभाल की जिम्मेदारी स्थानीय लोगों द्वारा किए जाने को सुनिश्चित किया गया। प्रथम चरण में लगभग पंद्रह सौ (1500) पौधे लगाने का काम किया गया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 17 सितम्बर 2017 से 23 सितम्बर 2017

हे सोम! हृदय–कलश में प्रवेश करो

● **डॉ. रामनाथ वेदालंकार**

पवस्य सोम देववीतये वृषा, इन्द्रस्य हार्दि सोमधानमाविश।
पुरा नो बाधाद् दुरिताति पारय, क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते।।

ऋग् ९.७०.९

ऋषिः **रेणुः वैश्वामित्रः**। देवता **पवमानः सोमः**। छन्दः **जगती**।

● **(सोम)** हे सोम परमात्मन्! **(तू)**, **(वृषा)** वर्षक **(होता हुआ)**, **(देववीतये)** दिव्य गुणों की प्राप्ति के लिए, **(पवस्व)** प्रवाहित हो, **(इन्द्रस्य)** आत्मा के, **(हार्दि)** हृदय–रूप, **(सोमधानं)** सोम–कलश में, **(आविश)** प्रविष्ट हो।, **(बाधात्)** बाधे जाने से, **(पुरा)** पहले, **(नः)** हमें, **(दुरिता अति)** पापचरणों से लंघाकर, **(पारय)** पार करदे। **(क्षेत्रवित्)** मार्ग का ज्ञाता, **(विपृच्छते)** विशेषरूप से पूछनेवाले के लिए, **(दिशः)** दिशाओं को, **(आह हि)** बताता ही है।

● हे रसागर सोम परमात्मन्! तुम 'वृषा' हो, रस की वर्षा करनेवाले हो। तुम दिव्य गुणों के रस के साथ मेरे अन्दर प्रवाहित होवो। तुम आत्मा के हृदय–रूप सोम–कलश में आकर प्रविष्ट होवो। मेरा आत्मा न जाने कब से सोम–पान के लिए उत्कंठित हो रहा है, उस प्यासे की तृषा को दूर करो। तुम कामवर्षी हो, मेरी कामना को पूर्ण करो। तुम आनन्दवर्षी हो, मुझपर आनन्द की वर्षा करो।

कभी–कभी मेरा आत्मा 'दुरितों' से घिर जाता है। पाप–भावनाएँ उसे आगे बढ़ने से रोकती हैं। पाप–कर्म उसे निगलने के लिए तैयार रहते हैं। आसपास का पापमय वातावरण उसे पाप–मार्ग पर चलने के लिए प्रलोभित करता है। ऐसे समय में हे मेरे सोम प्रभु! क्या तुम खड़े देखते ही रहोगे? क्या तुम मुझे 'दुरितों' से ग्रसा जाने दोगे? क्या तुम मुझे पाप–ताप के प्रहारों से छलनी हो जाने दोगे? क्या तुम मुझे दुराचार–रूप शत्रुओं से आक्रान्त हो जाने दोगे? नहीं, तुम मेरे उद्धारक होकर आओ। इससे पहले कि 'दुरित' मेरे आत्मा पर प्रभुत्व पायें, उसे पतनोन्मुख करें, तुम त्वरित गति से मेरे पास आ जाओ और मुझे उन दुरितों से लंघाकर पार कर दो। संसार का यह नियम है कि जो 'क्षेत्रवित्' है, मार्ग का ज्ञाता है, वह पूछनेवाले को दिशा बताता ही है। तुमसे बढ़कर 'क्षेत्रवित्' बढ़कर मार्गज्ञ अन्य कौन है! अतः हे मेरे सोम प्रभु! मैं तो तुम्हीं से दिशा पूछता हूँ। मैं दिग्भ्रान्त हो रहा हूँ, तुम कुतुबनुमा यन्त्र की सुई बनकर मुझे दिशा दर्शाओ। यदि तुमसे दिशा–ज्ञान न मिला, तो मेरा जीवन–पोत भव–सागर में डूबकर नष्ट–भ्रष्ट हो जायेगा। हे प्रभु! मुझ भूले को सही राह दिखाओ, मुझ भटके को गन्तव्य लक्ष्य पर पहुँचाओ।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

अमृत–पान

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

स्वामी जी ने कहा कि अन्तःकरण की दो वृत्तियाँ हैं, जो पुण्य की ओर और पाप की ओर और पाप की ओर ले जाती हैं। यदि अन्तःकरण दोनों वृत्तियों को बढ़ने देता है, तो वह आपत्ति में फँस जाएगा और दोनों उसे अपने प्रयोजन के लिए प्रयुक्त करने का प्रयत्न करेंगी, परन्तु यदि अन्तःकरण पुण्य की वृत्ति को ही बढ़ाएगा और पाप की वृत्ति को रोक देगा तो अन्तःकरण आनन्दित रहेगा और उसे किसी प्रकार की घबराहट का सामना नहीं करना पड़ेगा।

दूसरी कथा में स्वामी जी ने कहा वेदाध्ययन के द्वारा स्वाध्याययज्ञ सत्य कर्म है। स्वाध्याययज्ञ करते करते सत्य कर्मों का ज्ञान हो जाता है। भक्ति की बुद्धि स्वाध्याय से पैदा होती है। ज्ञान स्वाध्याय से उत्पन्न होता है। भक्ति सच्चे हृदय से हो तो ज्ञान के नेत्र खुल जाते हैं। यदि ज्ञान के नेत्र शास्त्र के अनुकूल खुल गए तो वैराग्य का आनन्द प्राप्त होता है और यदि मन में पूर्ण रूप से वैराग्य पैदा हो गया तो मोक्ष की प्राप्ति होती है।

आगे पढ़ेंगे दो लघु कथायें

रेलवे स्टेशन की खाली और भरी गाड़ियाँ

भीड़–भड़क्का था। लोगों की बड़ी भारी भीड़ थी। रेलवे प्लेटफार्म पर एक शोर मचा हुआ था। सामने बहुत–सी गाड़ियाँ खाली पड़ी थीं। उनका रंग और रोगन अत्युत्तम था। अन्दर गदेले थे। विश्राम का सामान था और प्रत्येक प्रकार की सुविधा थी, परन्तु प्लेटफार्म पर खड़ी हुई जनता की दृष्टि कहीं और ही लगी हुई थी। इतनी देर में गड़गड़ाहट का शोर मचाती फप्प–फप करती हुई गाड़ी सामने आकर खड़ी हो गई। सारे डिब्बे स्त्री–पुरुष, बच्चों और बूढ़ों से खचाखच भरे हुए थे, परन्तु गाड़ी के दरवाजे खुले और लोग झुण्ड–के–झुण्ड अन्दर प्रविष्ट होने लगे। गाड़ी के अन्दर के लोग पहले ही तंग बैठे थे। अब एक अन्य संकट आ पड़ा। धक्कम–धक्का है, चीं–पीं है। बच्चे रोते हैं, बूढ़े लड़खड़ाकर गिरते हैं। नौजवान पिसे जाते हैं। किसी की पगड़ी उतर गई। किसी की टोपी उछल गई, परन्तु सभी यह प्रयत्न करते हैं कि किसी प्रकार गाड़ी में बैठने की न सही, खड़े होने को ही स्थान मिल जाए। कुछ मनचलों ने तो गाड़ी के फुट–बोर्ड पर पाँव टिकाने के लिए स्थान मिल जाने को ही उचित समझा है।

यह सारा दृश्य है। एक ओर सर्वथा खाली, विश्राम देने वाली, गदेले और पंखोंवाली गाड़ियाँ खड़ी थीं। दूसरी ओर की गाड़ी में यह धकापेल हो रहा था। इसी दृश्य को एक चिन्ताशून्य व्यक्ति खड़ा हुआ देख रहा था। "विचित्र मूर्ख हैं, और गाड़ियाँ खाली खड़ी हैं, उसमें नहीं चढ़ते और इसी एक में ठसाठस भरती होने चले जा रहे हैं। इन लोगों को बुद्धिमान् कौन कहेगा? भला, इतना कष्ट, इतनी सर्दी, इतनी खींचातानी, इतने थका देने वाले प्रयत्न की आवश्यकता क्या है? ये सब इन खाली गाड़ियों में जाकर सवार क्यों नहीं हो जाते।" यह चिन्तामुक्त यही सोच रहा था। उसके इन विचारों ने उसके मुखमण्डल का रंग बदला। होंठ हिलने लगे और वह कोई आवाज् निकालने ही लगा था कि गाड़ी ने सीटी दी और यह जा, वह जा, दृष्टि से दूर हो गई। पीछे से वह हँसा और उसने ठहाका लगाया– "विचित्र मूर्ख हैं। वाह, आज विचित्र लोग देखे। अब व्यर्थ के कष्ट में फँसे रहेंगे।"

पढ़ने वाले कुछ समझे! क्या हुआ? रेलवे स्टेशन के इन दृश्यों को देखनेवाला तो एक ही चिन्तामुक्त है, जो खाली गाड़ियों को छोड़कर भरी गाड़ियों में सवार होने वालों की वृद्धि की हँसी उड़ा रहा है, परन्तु संसार के स्टेशन पर असंख्य ऐसे लोग हैं, जो सचमुच सुखदायक, गदेलेवाली खड़ी हुई गाड़ियों में विश्राम कर रहे हैं। उन्हें अपने गन्तव्य स्थल का कुछ पता नहीं। भरी गाड़ियों में सवार होने वालों के सामने एक लक्ष्य है, जिसपर पहुँचने के लिए वे कष्ट सहन करते हैं, धक्के खाते हैं। उनकी पगड़ियाँ उछाली जाती हैं। अपमान को भी वे सहन करते हैं। इस संघर्ष में चोटें भी आती हैं, पसीना भी बहता है, परन्तु एक मिनट के लिए भी तो यह विचार नहीं करते कि क्यों कष्ट सहन करें, क्यों न सुखदायक गदेलेवाली खाली गाड़ियों में विश्राम कर लें, परन्तु विचित्र है और आश्चर्यचकित कर देने वाला आश्चर्य है कि संसार के स्टेशन पर बहुत कम लोग ऐसे दिखाई देते हैं, जो लक्ष्य पर पहुँचाने वाली गाड़ी में सवार होते हैं, प्रत्युत अधिक संख्या ऐसे लोगों की है, जो आनन्द से खाली खड़ी गाड़ियों में आलस्य और प्रमाद की निद्रा में सोए पड़े हैं।

बताओ! अब किस वर्ग पर ठहाका लगाया जाए। हा कष्ट! लोग प्रतिदिन स्टेशनो पर ऐसे दृश्य देखते हैं फिर भी अपने जीवन को सफल बनाने के लिए इनसे शिक्षा ग्रहण नहीं करते। कहो! तुम किनमें हो? खाली खड़ी सुखदायक गाड़ियों में विश्राम करने वाले या

शेष पृष्ठ 03 पर ☞

वेद के प्रादुर्भाव की कहानी–6

● भद्रसेन

ओम् येन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः।
तत्कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः।। अथर्व. 3,30,4

शब्दार्थ–

वः तुम्हारे गृहे– घर में, आवास स्थलों, ग्रामों, नगरों में पुरुषेभ्यः– जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पूर्णता चाहने वालों के लिए तत्–उस सर्वप्रसिद्ध, सर्वपरिचित ब्रह्म– (लाभ, प्रभाव की दृष्टि से जो) महान् है ऐसे वेद ज्ञान को, जो कि संज्ञानम्– सम्यक् ज्ञान है, जिसमें भ्रम, संशय, भय, विपरीत ज्ञान नहीं है। ऐसे सुनिश्चित संज्ञान को ऐसे विशेषणयुक्त ब्रह्म को कृण्मः– करते हैं, देते हैं, सामने लाते हैं। येन– जिस ज्ञान, प्रेरणा के प्रभाव से, व्यवहार में लाने से देवाः– समझदार, ऊंचा उठने की चाहना वाले न वियन्ति– उल्टे रास्ते पर नहीं जाते, सदा सीधे–सच्चे कार्य ही करते हैं च– और मिथः–परस्पर, एक–दुसरे सामाजिक सदस्य से, मित्र से, भाई–बहन आदि रिश्ते वालों से न– उ– विद्विषते–किसी भी ढंग से द्वेष–हानि पहुँचाने का कार्य नहीं करते, किसी की हानि, नुकसान पर प्रसन्न नहीं होते।

व्याख्या–

पुरुषेभ्यः– सारे मनुष्य भौतिक, बौद्धिक आदि क्षेत्रों में प्रगति चाहते हैं, पूर्ण होना चाहते हैं। अतः उनको पुरुष नाम से पुकारा जाता है। यह पूर्ण प्रगति जिस साधन से होती है, उसी को मन्त्र में ब्रह्म, संज्ञानं, संज्ञानं ब्रह्म कहा है। यह ईश्वर का सुनिश्चित ज्ञान है। ईश्वर का रचा यह प्रत्यक्ष संसार अपनी एक–एक रचना के द्वारा बता रहा है, कि यह सकल गुण सम्पन्न कलाकार की अनोखी कला है। जैसे कि कहा जाता है– पत्ता–पत्ता तेरा पता दे रहा है। अतः इन वायु, सूर्य, जल आदि प्राकृतिक पदार्थों से सिद्ध होता है, कि इस संसार का रचनाकार, व्यवस्थापक, नियामक हर तरह से पूर्ण सर्वज्ञ, शक्तिमान, सर्वव्यापक आदि गुणयुक्त है। अतः उस का ज्ञान भी प्रत्येक प्रकार से पूर्ण है। तभी तो कहा गया है 'वेद कहें इक बात' अर्थात् वेद सुनिश्चित, स्पष्ट बात कहते हैं। वे भ्रम, संशय, मिथ्याचारी बात नहीं करते।

येन देवा न वियन्ति– ऐसे वेद ज्ञान की शिक्षाओं से जो शिक्षित हो जाते हैं। इन प्रेरणाओं को अपने जीवन में जो अपना लेते हैं। वे फिर सदा सर्वत्र सही राह पर ही चलते हैं। वे स्वार्थ, लोभवश, नासमझी करके भी उलटी राह पर नहीं चलते। औरों की बात ही क्या? एक चोरी करने वाला भी दिल से यही चाहता है, कि कोई भी, कभी भी, कहीं भी मेरी चीज की चोरी, छीना–झपटी न करे। अतः चोरी छीना–झपटी स्पष्ट रूप से उल्टा कर्म है। पुनरपि स्वार्थ और लोभ के कारण व्यक्ति आज अनेक प्रकार से चोरी जैसे उल्टे कर्म कर रहे हैं।

कहीं दुकानदार उचित भाव, सही भार, उचित माल की चोरी कर रहा है। तो कहीं कार्यालय के कर्मचारी टाल–मटोल, समय–श्रम बचाने की चोरी कर रहे हैं। कहीं विविध उद्योगों में मलिक (मा–लीक) धन बचाने, कम वेतन देने, अधिक काम लेने के उपाय वर्त रहे हैं। तो दूसरी ओर मजदूर, नौकर (नो–कर) वर्ता काम से बचने, माल को इधर–उधर करने आदि के रूप में चोरी करते हैं। हर एक अपने–अपने ढंग से स्वार्थपूर्ति में ही जुटा हुआ है।

मन्त्र में मुख्य रूप से दूसरी बुराई– नो च विद्विषते मिथः – के रूप में द्वेष– परस्पर जलन, हानि पहुँचाने या दूसरे के नुकसान से खुश होने की है या इनके कारण तू–तू, मैं–मैं से शुरू होकर लड़ाई–झगड़े के रूप में सामने आती है। कहीं मानसिक, वाचिक, रूप में जलन से यह सब हो रहा है, तो कहीं व्यवहारिक रूप से शरीर के अंगों से और कभी अनेक तरह के हथियारों से झगड़ों का जाल फैला हुआ दिखाई देता है।

सारी सामाजिक बुराइयों को यहाँ दो रूपों में चित्रित किया गया है। विविध न्यायालयों में सारे अभियोग अधिकतर इन दोनों कारणों से ही सामने आ रहे हैं। मन्त्र बड़े विश्वास से कह रहा है, कि ये सारा विवाद, बुराईयों वेद ज्ञान से शिक्षित होने पर, अपनाने पर, समझे हुए में नहीं होती। हाँ, अधूरा, कोरे शब्द ही गुँजाने वाला 'थोथा चना बाजे घना' की कहावत को चरितार्थ करता है। हाँ, अनेक स्वयं न चाहते हुए भी अपनी ओर से कुछ न करने पर भी विवाद में व्यर्थ घसीट लिए जाते हैं। ऐसी स्थिति में एक पक्ष का द्वेष वहाँ कारण होता है। दूसरा पक्ष सामाजिकता के कारण कष्ट उठाता है।

वेद ने ईर्ष्या–द्वेष को जंगल की आग से उपमा दी है। जैसे यह आगे से आगे फैलती, बढ़ती है। आप तो जलती ही है, पर अपने साथ दूसरे को भी जलाती है। (अथर्व–7,45,2)

मन्त्र इन शब्दों से प्रेरणा, सन्देश दे रहा है, कि जैसे प्रकाश से अन्धकार दूर हो जाता है। ऐसे ही वेदाज्ञान से सर्वविध अन्धविश्वास, अन्धेर दूर हो जाता है। जैसे हमारी आँखे बाह्य प्रकाश की सहायता से अपना कार्य करती है। ऐसे ही हमारी अन्दर की बुद्धिरूपी आँख भी ज्ञान रूपी आन्तरिक प्रकाश से अपनी सोच को उभारने में समर्थ होती है। यह ज्ञान वेद के माध्यम से ही पहले–पहल संसार में सामने आया।

विशेष– मूलतः यह मन्त्र पारिवारिक वर्णन का है। अतएव संज्ञान पारिवारिक दृष्टि से जो सांझा हित है, संयुक्त बातें हैं। उस सामूहिक ब्रह्म–महान् रहस्य को सामने लाया जा रहा है। अतः पारिवारिक दृष्टि से कृण्मः उत्तम पुरूष बहुवचन हैं। जिससे परिवार का सांझा संकल्प सामने आ रहा है। मनुस्मृति, गीता में ब्रह्म शब्द वेद के लिए भी आया है। वेद ने आ वदानि, अभिमन्त्रये के रूप में उत्तम पुरूष एकवचन का अपने सम्बन्ध में प्रयोग किया है।

तत् ब्रह्म– (पहले–पहल ज्ञान कैसे–

आज तो यह नियम निर्बाध रूप से चल रहा है, कि हर एक अपने सिखाने वाले से सीखता है। पर जब भी संसार शुरू हुआ, तब आज की तरह पढ़ाने वाले नहीं थे। अतः सोचने वाली बात यह है, कि तब पढ़ाई कैसे प्रारम्भ हुई? उस समय केवल संसार को बनाने वाला ही विद्या का ज्ञाता था। आज की तरह और कोई विकल्प न होने से ईश्वर ने ही संसार सर्जन के सदृश ज्ञान भी दिया इसी लिए जितने भी ईश्वर को मानने वाले आस्तिक हैं। वे सभी एक स्वर से यह मानते हैं, कि संसार के सूर्य आदि समान ज्ञान का प्रारम्भ भी ईश्वर ने ही किया है। इसी लिए सभी आस्तिक अपने धर्मग्रन्थ को ईश्वर का ज्ञान, देन मानते हैं।

हाँ, ईश्वर ने सूर्य आदि भौतिक पदार्थ सारे के सारे संसार के प्रारम्भ में बनाए हैं। इसीलिए ये सारे समान रूप से सभी को प्राप्त हो रहे हैं। वेद ने इसीलिए इन प्राकृतिक पदार्थों के लिए जहां प्रथमज का प्रयोग किया है, वहां वेद के लिए भी अनेक वार प्रथमज शब्द का प्रयोग किया है। अर्थात् ये सारे संसार के शुरू में पैदा हुए हैं।

182 शालीमार नगर, होशियारपुर
पंजाब 146001

☞ पृष्ठ 02 का शेष

अमृत–पान ...

लक्ष्य पर पहुँचाने वाली भरी हुई गाड़ियों में संघर्ष में सवार होने वाले?

मस्तिष्क का पागलपन

प्रातःकाल हो चुका था। सरदी ज़ोरों पर थी। सुन्दर फूलों का उद्यान=बाग़ के साथ काँटे थे। सुन्दर फूलों का उद्यान=बाग़ था। झाड़ियों के साथ काँटे थे। उनकी एक–एक टहनी से माली फूल तोड़ रहा था। काँटे चुभते थे। खून निकलता था, परन्तु माली फूल तोड़ने में व्यस्त था। प्रातःकाल व्यतीत हो गया, सरदी कम हो गई। सूर्य तेजी से चमकने लगा। धूप ने गरमी उत्पन्न कर दी। यहाँ तक कि दो प्रहर को पसीना आने लगा, परन्तु माली उसी प्रकार सुगन्धित और सुन्दर फूलों को तोड़ने में व्यस्त था। इसी प्रकार दोपहर भी व्यतीत हो गई। सायंकाल सिर पर आ पहुँचा। माली ने एक बड़ा भारी टोकरा फूलों से भरा और सिर पर उठाकर जल्दी–जल्दी शहर की ओर पग बढ़ाने लगा।

अँधेरा अभी फैला नहीं था। सूर्य झाँक–झाँककर संसार को देख रहा था। आकाश पर लालिमा फैली हुई थी। माली को तेजी से चलते देखकर एक मनुष्य ने पूछा– "इतनी जल्दी क्या है? कहाँ जा रहे हो?"

माली– बाग़ से फूल लेकर घर जा रहा हूँ।

मनुष्य– इन फूलों के क्या हार बनाओगे?

माली– नहीं, इत्र खेंचूँगा।

मनुष्य– फिर क्या करोगे?

माली– उसका एक और बार इत्र खेंचूँगा।

मनुष्य– फिर इस इत्र के इत्र का क्या करोगे?

माली– तीसरी बार फिर इस के इत्र का इत्र खेंचूँगा।

मनुष्य– इतने भारी टोकरे में से वह तीसरी बार निकाला हुआ इत्र कितना रह जाएगा?

माली– अभी इस पर बस नहीं। चौथी बार फिर इत्र निकालूँगा और इतने फूलों से चौथी बार निकालते हुए इत्र का वज़न दो तोले (चौबीस ग्राम) से अधिक नहीं होगा।

मनुष्य– ओहो! बड़े परिश्रम के पश्चात् इतना ही इत्र निकलेगा।

माली– हाँ, इतना ही मिल सकता है।

मनुष्य– फिर इस दो तोला इत्र का क्या बनाओगे?

माली– नाली में गिरा दूँगा।

इस उत्तर पर उस मनुष्य ने ठहाका लगाया। विचित्र मूर्ख मनुष्य है। इतने परिश्रम, सिरदर्द और प्रयत्न के पश्चात् अपने सारे परिश्रमों और प्रयत्नों को नाली में फेंक देगा।

पाठक भी माली के अन्तिम उत्तर पर हँसेंगे और कहेंगे कि निःसन्देह माली मस्तिष्क में पागलपन है।

परन्तु ठहरो! तनिक सँभलो और सोचो कि क्या सचमुच आजकल हम इस माली की भाँति आचरण नहीं कर रहे हैं।

कितने लोग हैं जो ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं और इत्र से भी बहुमूल्य वीर्य की रक्षा करते हैं। वीर्य शरीर की ज्योति है। यह अत्यन्त परिश्रम से तैयार होता है। कई स्थितियों को पार करता है, फिर जाकर शुद्ध इत्र अथवा वीर्य तैयार होता है, परन्तु मस्तिष्क का पागलपन देखिए कि बहुमूल्य वस्तु को व्यर्थ जाने दिया जाता है। इसका कोई ध्यान नहीं दिया जाता और ब्रह्मचर्य के उपायों पर आचरण नहीं किया जाता है। आज सोचो! क्या तुम्हारे मस्तिष्क में पागलपन तो नहीं है?

.... क्रमशः

स्वाध्याय का स्वरूप

● स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती

जिस स्वाध्याय को भगवान् याज्ञवल्क्य परम–श्रम, राजर्षि–मनु परम–तप, महर्षि दयानन्द परम–धर्म, मुनिवर पतंजलि परम–योग, उपनिषद्कार परम–स्कन्ध और परम–दीक्षा, शतपथकार परम–यज्ञ तथा भगवती श्रुति परम–रस कहते हैं, जिसकी महिमा का गान करते हुए शास्त्रकार नहीं अघाते और जो प्रत्येक आश्रमस्थ व्यक्ति के लिए पालनीय और द्विजों के लिए आचरणीय है, उस स्वाध्याय शब्द का मूल अर्थ क्या है? स्वाध्याय से हम क्या समझें? इस शब्द की रचना किस प्रकार हुई है? उसमें धातु क्या है? उपसर्ग क्या है? इत्यादि परिज्ञान होना आवश्यक है।

स्वाध्याय शब्द सु+आङ्+अधि पूर्वक इङ्–अध्ययने धातु से घञ् प्रत्यय करके बनता है। इसके विशद अर्थ को समझने के लिए इसमें प्रयुक्त धातु उपसर्ग और प्रत्युत के अर्थ को समझना होगा। इसमें नित्य अधि उपसर्ग पूर्वक इङ्धातु का प्रयोग है, जिसका अर्थ अध्ययन ही है। इङ् अध्ययने, अर्थात् इङ् के अर्थ अध्ययन में भी 'अधि' उपसर्ग लगा हुआ है। इसका अभिप्राय तो यह हुआं कि अध्ययन अर्थ केवल इङ् धातु का नहीं, अपितु अधि–पूर्वक इङ् धातु का है, अन्यथा इङ् अध्ययने रूप न होकर इङ्अयने रूप होना चाहिए था। धातु और अर्थ दोनों से अधि उपसर्ग को हटाया कि दोनों का मूल रूप सामने आ गया, धातु का इङ् रूप और अर्थ का अयन रूप।

अर्थ के मूल रूप अयन को समझ लेने के पश्चात् अब देखें कि अधि उपसर्ग के बल से अयन का अर्थ अध्ययन कैसे हो गया? यहाँ हम नैरुक्त प्रक्रिया का आश्रय लेकर ही अध्ययन शब्द का अर्थ निर्धारित करते हैं। किसी भी ग्रंथ के अध्ययन का अभिप्राय यह है कि अध्येता की ग्रंथ में अबाध गति का होना। यदि यह पाठ करने लगे तो अबाधगति से करे। यदि अर्थ करने लगे तो बेरोक चलता जाए। उसका आशय समझने में भी उसकी कुण्ठित न हो। हमारे इस अर्थ की पुष्टि 'पारंगत' शब्द से होती है। जब कोई व्यक्ति अपनी विद्या का पूर्ण जानकार होता है, तो यही कहा जाता है कि उसका पारंगत है अर्थात् उस व्यक्ति की अपने विषय में परले विषय सिरे तक गति है। जब कोई अध्यापक पाठ्य ग्रंथ को पढ़ाते समय उसके अध्याय, पृष्ठ और पंक्ति तक का पता बता देते हैं, तो सहसा मुख में निकलता है कि इनकी इस ग्रंथ में बड़ी गति है। 'अध्ययन' का अर्थ हुआ 'किसी विषय में (आद्योपान्त) अबाध गति' अधि=पारं=अबाध। पारं–गति। हमारे इस अर्थ की पुष्टि धातु के मूलार्थ 'अयन' से होती है।

अयन का शब्दार्थः

अयन शब्द का अर्थ समझने के लिए हमें अधिक प्रयत्न की आवश्यकता नहीं। सूर्य की दो प्रसिद्ध गतियों को अयन नाम दिया जाता है, दक्षिण अयन और उत्तर अयन, सूर्य का दक्षिण और उत्तर की ओर प्रवेश। बस अध्ययन का भी यही अर्थ है कि 'अध्येता की वह अबाध गति जिससे वह अपने विषय में पारंगत' अथवा 'वह प्रवेश जिससे वह ग्रंथ में आद्योपान्त हो जाए' अयन कहलाएगा। अयन और **आय** में केवल प्रत्यय का भेद है, अर्थ–भेद नहीं– स्वध्ययन, स्वाध्याय।

हमारे अर्थ की सम्पुष्टि एक और बात से भी होती है। जहाँ अध्याय शब्द में गत्यर्थक अय धातु का प्रयोग है, वहाँ इङ् अध्ययने धातु के अतिरिक्त एक और धातु इण् गतौ धातु भी है, जिससे 'अय' शब्द बनता है, अध्याय में भी इण् गतौ धातु मानने से यह समस्या हल हो जाती है। फिर गति का अर्थ केवल चलना ही नहीं अपितु **'गतेस्त्रयोऽर्थाः–ज्ञानम् गमनम्, प्राप्तिश्चेति।'** अब अध्याय शब्द को गत्र्थक अय गतौ अथवा इण् गतौ धातु से निष्पन्न मानने पर यह अर्थ स्पष्ट हुआ कि स्वाध्याय वह प्रक्रिया है जिसमें (सु) उत्तमतया (आ) प्रत्यक्ष द्वारा (अधि) अधिकृत रूप से **(अयः)** प्रवेश, उसका ज्ञान, उसके प्रति प्रगति और उसकी प्राप्ति सम्भव हो।

पुनश्च– आगम शब्द वेदादि शास्त्रों के लिए प्रयुक्त होता है। इन्हें आगम इसीलिए कहते हैं कि ये स्वाध्यायशील व्यक्ति के समीप स्वतः चले आते हैं। जैसे–जैसे वह शास्त्रों के अध्ययन में लगता है वैसे–वैसे ज्ञान उसके समीप चला आता है, अथवा इन्हें आगम कहने का दूसरा प्रयोजन यह भी हो सकता है कि स्वाध्यायशील व्यक्ति का अन्तिम गन्तव्य ये आगम ही हैं, वेद ही हैं। वह उसके गन्तव्य की सीमा है, ज्ञान की अथवा आप्ति की परा सीमा है। इस प्रकार आगम, निगम, अवगम आदि शब्दों में गमन अर्थ वाली गम् धातु का प्रयोग होने से और इन प्रयोगों को देखने से यह निश्चय हुआ कि स्वाध्याय शब्द में गत्यर्थक अय अथवा इण् गतौ धातु भी असम्भव नहीं।

तत्र च– निगम शब्द का प्रयोग वेद के लिए अत्यन्त प्रसिद्ध है। आचार्य यास्क ने तो अपने निरुक्त ग्रन्थ में **इत्यपि निगमो भवति** की यत्रतत्र झड़ी लगा दी है। इसमें भी उसी गम् धातु का ही प्रयोग है। अतः अध्ययन शब्द में गत्यर्थक धातु खोजनी चाहिए। यहाँ आचार्य यास्क के सिद्धान्त 'न संस्कारमाद्रियेत' (निरुक्त 2/1/1) का आश्रय श्रेयस्कर है। यास्क का भाव यह है कि निर्वचन करते समय व्याकरण द्वारा होने वाले शब्द–संस्कार की चिंता न करें, यह न सोचें कि यह शब्द व्याकरण से कैसे बनेगा? बनेगा भी या नहीं? इस बात की चिन्ता किये बिना ही अर्थनित्यः परीक्षेत (निरु. 2/1/1) अर्थ को मुख्य मानकर निर्वचन का कोई भी मार्ग निकाल लें। जिस मार्ग से अपेक्षित अर्थ प्राप्त हो सकता हो उसके अनुसार निवर्चन कर लें। यहाँ हम अध्याय शब्द का अर्थ अभीष्ट है कि "अध्येता की किसी भी ग्रंथ मे आदि से अन्त तक अबाध गति होना।"

अध्याय का अर्थः

आद्योपान्त वह प्रवाह जो पठन, मनन, निदिध्यासन को अखण्ड रखे; जहाँ पाठक के दृष्टि–पथ में शब्द–वाक्य आते जाएँ, वहाँ उनका अर्थ भी उद्‌बुद्ध होता जाए और साथ ही साथ निदिध्यासन भी चलता चले (उसमें कहीं रुकावट न हो)। पाठक की दृष्टि कहीं शब्दार्थ की अनभिज्ञता से रुक न जाए। शब्द का अर्थ से क्या सम्बन्ध है? इस प्रश्न के निदिध्यासन में लगी बुद्धि कुंठित न हो जाए (अर्थात् ग्रंथाध्ययन में जहाँ आंखें अविराम बढ़ें, वहाँ मन और मस्तिष्क भी अविराम बढ़ें) बस इस गति–प्रवाह को, (सरस्वती) गति को ही हम अयः कहेंगे। पढ़नेवालों को इस गति पर अधिकार हो, तभी वह अध्ययन (अधि–आ–अयः) कहलाएगा, स्वाध्याय कहलाएगा।

अब इसी 'अध्याय' शब्द में अन्य दो उपसर्गों के जोड़ देने से स्वाध्याय बन जायेगा। दो उपसर्ग हैं सु और आङ् अर्थात् सु, आङ्+अधि+आङ्+इण् गतौ धातु से अच् प्रत्यय होकर स्वाध्याय शब्द निष्पन्न होगा, जिसका अर्थ होगा **'सुष्ठु आवृत्य अध्यायः स्वाध्यायः**, (सु) उत्तम रीति से (आ) आद्योपान्त (अधि) अधिकृत रूप से (आ) सब ओर से (इण्) पहुँच, अर्थात् स्वाध्यायशील व्यक्ति का उत्तमता से (ग्रंथ के) आरम्भ से अन्त तक अधिकारपूर्वक सर्वतः प्रवेश का नाम स्वाध्याय है।

आचार्य यास्क उपसर्गों का अर्थ लिखते हुए सु उपसर्ग का अर्थ करते हैं– **सु इत्यभिपूजितार्थे**[1](निरु. 1/1/15) जिस किसी पद से पूर्व 'सु' उपसर्ग जुड़ जाता है उस पद के अर्थ में पूजा–बुद्धि पैदा कर देता है। सभी उस वस्तु को सम्मान की दृष्टि से देखने लगते हैं। सुमति का अर्थ है ऐसी बुद्धि, जिसमें सभी व्यक्ति पूजाभाव, आदरभाव रखते हैं। बस स्वाध्याय शब्द में भी 'सु' उपसर्ग का यही अर्थ है कि ऐसा अध्ययन जो सबसे पूजित और सम्मानित हो।

'सु' के अनन्तर आङ्उपसर्ग का भी महत्त्व है। आङ्उपसर्ग के बहुत–से अर्थ होते हैं। एक अर्थ है समन्तात्– सब ओर से। यदि स्वाध्याय में सु+आङ् में 'आङ्' का सब ओर से' अर्थ करें, तो स्वाध्याय का अर्थ हुआ कि ग्रन्थ का ऐसा पाठ जिसमें कोई भाग छूटने न पाए। स्वाध्याय करने वाला जहाँ उत्तमता के साथ अध्ययन करे, वहाँ विषय पर सब ओर दृष्टिपात करे। प्रायः देखा गया है कि व्यक्ति पूरी पुस्तक पढ़ गया, परन्तु उसे लेखक के नाम का पता नहीं। इसी प्रकार किसी ने पुस्तक तो सारी पढ़ ली, परन्तु उसकी भूमिका पढ़ी ही नहीं। वह अध्ययन हो तो हो, स्वाध्याय नहीं है।

आङ् का एक और अर्थ सीमा भी है **'आङ्मर्यादाभिविध्योः'**[2] (अष्टा. 2/1/12) मर्यादा और अभिविधि अर्थ में भी इसका प्रयोग होता है। मर्यादा और अभिविधि में यही अन्तर है कि जहाँ मर्यादा अर्थ में प्रयुक्त आङ् संपृक्त अर्थ को सम्मिलित नहीं करता, वहाँ, अभिविधि अर्थ में प्रयुक्त आङ् अपने से सम्पृक्त अर्थ को सम्मिलित कर लेता है, यथा महाकवि कालीदास द्वारा रघुवंशियों का वर्णन करते हुए यह लिखना कि **आसमुद्रक्षितीशानाम्**[1] (रघु. 1/5) अर्थात् समुद्र–सहित पृथिवी के स्वामी रघुओंका। यहाँ समुद्र से पूर्व प्रयुक्त आङ्उपसर्ग अभिविधि का द्योतक है कि समुद्रसहित पृथिवी के स्वामियों का। इसी प्रकार स्वाध्याय में सु+आङ्पूर्वक अध्याय शब्द का अर्थ होगा अध्याय को=वेद को सम्मिलित करके पठन करना स्वाध्याय है।

स्वाध्याय से क्या अभिप्राय लिया जाए? क्या हर किसी ग्रन्थ को पढ़ लेना स्वाध्याय है? नहीं, सर्वथा नहीं। जब तक अध्ययन में वेद सम्मिलित न हो, तब तक वह स्वाध्याय नहीं। वेद को सम्मिलित करके किया गया अध्ययन ही स्वाध्याय कहलाएगा। आङ् उपसर्ग के अभिविधि अर्थ का महत्त्व भी यही है कि अध्याय को=वेद को सम्मिलित करके पढ़ने का नाम स्वाध्याय है।

अध्याय शब्द वेद का वाचक हैः

स्वाध्याय शब्द में प्रयुक्त **"अध्याय"** शब्द वेद का वाचक है। आचार्य यास्क जहाँ कहीं भी लौकिक और वैदिक इस प्रकार दो भेद करते हैं, वहां लौकिक के लिए भाषा शब्द का और वेद के लिए अध्याय शब्द क प्रयोग करते हैं। निपातों का लोक और वेद में प्रयोग दिखाते हुए लिखते हैं– **"तेषामेते चत्वार उपमार्थे भवन्ति। इवेति भाषायां च अन्वध्यायं च"**[2] **(निरु. 1/2/1)** चार (निपात) उपमार्थ में प्रयुक्त होते हैं। इव यह (निपात) भाषा में अर्थात् लोक में भी और 'अध्याये इति अन्वध्यायम् अर्थात् वेद में भी उपमार्थ में प्रयुक्त होता है इत्यादि। यहाँ अन्वध्यायम् में आये अध्याय शब्द का अर्थ वेद सर्वसम्मत है; अतः वह अध्ययन ही स्वाध्याय कहलाएगा जिसमें

शेष पृष्ठ 07 पर ☞

हिन्दी कार्यान्वयन राष्ट्र–सम्मान है

● आचार्य भगवान देव ''चैतन्य''

हम सभी जानते है कि भारतवर्ष के संविधान में हिन्दी को राजभाषा घोषित किया गया है मगर इसके कार्यान्वयन के लिए जो प्रयास किए जाने चाहिए थे वे पूरे मन से नहीं हो सके हैं। होना तो यह चाहिए था कि संविधान की गरिमा और सम्मान को सुरक्षित रखते हुए तत्काल समूचे राष्ट्र में हिन्दी का प्रयोग अनिवार्य हो जाता मगर कुछ नेताओं की अदूरदर्शिता और अंग्रेज़े भक्त होने के कारण इस सम्बन्ध में टालमटोल जैसा वातावरण बनता रहा और फिर इसे कार्यान्वयन के लिए पन्द्रह वर्ष का समय दिया गया। बाद में राजनैतिक स्वार्थों के चलते यह समय अन्तकाल तक बढ़ा दिया गया। यही नहीं यहाँ तक व्यवस्था दे दी गई कि जब तक कोई एक प्रान्त भी हिन्दी को विरोध करता रहेगा, हिन्दी किसी के ऊपर थोपी नहीं जाएगी। अब चिन्तनीय यह है कि क्या राजभाषा के प्रति इस प्रकार का अन्याय करना संविधान की उलंघना नहीं थी? राजभाषा को मां का दर्जा दिया जाता है, तो क्या मां भी किसी पर थोपने की वस्तु है? क्या वह समस्त देश के लिए सम्माननीय नहीं है? क्या राजभाषा का इस प्रकार से अपमान करना राष्ट्रद्रोह नहीं है? कल को यदि कोई यह कह दे कि हमारे ऊपर तिरंगा झण्डा थोपा नहीं जाना चाहिए तो क्या यह बात मान ली जाएगी? जिस प्रकार हमारा ध्वज केवल कपड़े का टुकड़ा मात्र नहीं है बल्कि सम्माननीय है उसी प्रकार से हिन्दी भी हमारे लिए उतनी ही सम्माननीय होनी चाहिए। जिस प्रकार अपने राष्ट्रध्वज को ऊंचा रखने के लिए देश का प्रत्येक नागरिक अपना सिर कटाने के लिए या सर्वस्व लुटाने के लिए तैयार रहता है उसी प्रकार की भावना अपनी राष्ट्रभाषा के प्रति भी होनी चाहिए। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी तो यहाँ तक कहा करते थे कि स्वतन्त्र भारत में कलम की पहली नोक से ही पूरे राष्ट्र में हिन्दी को लागू कर दिया जाएगा। यही नहीं उनका कथन तो यहाँ तक था कि यदि स्वतन्त्र भारत में मुझे कोई विधान सभा या संसद में अंग्रेज़ी बोलता हुआ दिखाई दिया तो मैं उसे गिरफ्तार करवा दूंगा। उनका मानना था कि राष्ट्र भाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है। देश का यह गूंगापन और अभी कितने दिन चलेगा तथा अपनी भाषा के अभाव में और विदेशी भाषा के वर्चस्व के कारण कितने दिन और हमारी नई पीढ़ी पर अपसंस्कृति के संस्कार अभिशाप के रूप में प्रतिष्ठापित होते रहेंगे यह अत्यधिक चिन्तनीय विषय है। आज वक्त आ गया है कि हिन्दी के कार्यान्वयन को गंभीरता से लेकर राष्ट्रीय अस्मिता को बचाने की दिशा में सक्रियता से कार्य किया जाए।

यहाँ हम एक दूसरे ही पहलू पर विचार करना चाहते है कि सरकारी कामकाज में हिन्दी का प्रयोग क्यों नहीं हो पा रहा है। जब भी किसी से हिन्दी में काम करने की बात कही जाती है तो तर्क दिया जाता है कि हिन्दी में काम करना कठिन है जबकि वास्तविकता यह नहीं है। इसके विपरीत क्योंकि अंग्रेज़ी हमारी संस्कृति और जीवन के इतना समीप नहीं है जितना कि हिन्दी के प्रति एक भय, झिझक और पूर्वाग्रह मन में बिठा लेते है। यदि इन भावनाओं से मुक्त हो जाएँ तो हमें स्वंय ही प्रत्यक्ष हो जाएगा कि हिन्दी में काम करना कितना सरल है। जब हम अपने दैनिक जीवन में अधिकतम हिन्दी ही का प्रयोग करते हैं तो उसे फाईलों पर उतारने में भी हमें किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होनी चाहिए। जरा विचार करें कि 'I would like to see the file' के स्थान पर 'मैं फाईल देखना चाहूंगा या फाईल दिखाएँ लिखने में क्या कठिनाई हैं? एक और बात की ओर ध्यान देने की भी आवश्यकता है कि हिन्दी में कार्य करने के लिए हमें शब्दकोशों से भारी भरकम शब्द को ही देवनागरी लिपि में लिख दें, जब हिन्दी में काम करना आपका स्वभाव बन जाएगा तो स्वतः ही आपको अंग्रेज़ी शब्दों के हिन्दी विकल्प मिल जाएँगें। शब्दों के पीछे भागने की अपेक्षा भावों को प्रगट करने पर ही ध्यान देने की जरूरत है। आप ' File may be kept pending' के स्थान पर ' फाईल पैंडींग पर रख दी जाए या पैंडींग रखें' लिख सकते हैं। शब्दकोशों का सहयोग लेना आवश्यक तो हो सकता है मगर निन्तात आवश्यक नहीं। अपने मन की अभिव्यक्ति के लिए यदि भाव सशक्त हों तो मस्तिष्क में शब्द स्वयं पैदा हो जाते हैं अतः शब्दकोशों के पीछे भागने की आवश्यकता नहीं है।

जिस प्रकार शब्दों के दास बनने की आवश्यकता नहीं है उसी प्रकार मात्र अनुवाद के बल पर भी हिन्दी का कार्यान्वयन नहीं हो सकता है। प्रत्येक भाषा की अपनी संरचना और शैली होती है अतः अनुवाद के स्थान पर हिन्दी की स्वच्छन्द अभिव्यक्ति होनी चाहिए। अनुवाद के लिए भी मात्र शब्दकोषों पर ही निर्भर न रहकर हिन्दी भाषा बहुत ही बोझिल तथा अप्रासंगिक सी लगने लगेगी। अक्षरशः अनुवाद से तो कई बार वाक्य विन्यास भी हास्यस्पद सा बन जाता है। जैसे "See me today" का अनुवाद आज मुझे देखो कदापि नहीं हो सकता है अतः अनुवाद करती बार किसी भाषा का प्रयोग इस ढंग से किया जाना चाहिए कि उसका अपना स्वरुप और मौलिकता बिगड़ कर न रह जाए।

कुछ अंग्रेज़ भक्तों का यह भी आरोप है कि हिन्दी भाषा और उसके शब्द बहुत कठिन है उन्हें सरल बनाना चाहिए। यह तो ठीक है कि सरकारी कामकाज में हिन्दी के सरल से सरल शब्दों का प्रयोग किया जाना चाहिए मगर यह सरलीकरण इस सीमा तक नहीं होना चाहिए कि हिन्दी भाषा का स्वरुप और गरिमा ही समाप्त हो जाए। वास्तविकता यह है कि कोई भी शब्द सरल या कठिन नहीं होता है, वह तो मात्र परिचित या अपरिचित होता है। यदि वह हमारे लिए परिचित है तो वह सरल लगेगा और अपरिचित है तो हमें वह कठिन लगता है। जैसे झाड़–झंखाड़ कठिन शब्द है मगर व्यवहारिक है इसलिए हर कोई इसे समझ सकता है जबकि आसान शब्द अनुज का भाव समझना बहुतों के लिए कठिन हो सकता है। इसलिए हिन्दी को जब तक हम व्यवहार में नहीं लाऐंगे तक तक ही हमें उसके शब्द कठिन लग सकते है मगर व्यवहार में लाने से जब वे हमारे परिचित हो जाऐंगे तो वे सहज और सरल लगने लगेंगे। मैंनें स्वंय अपने कार्यालयों में देखा है कि आरंभ में कर्मचारियों को अरनड लीव और सबमिटिड प्लीज आदि कहना या लिखना सहज लगता था मगर अब अभ्यास से वे ही अर्जित अवकाश और प्रस्तुत है बड़ी सहजता के साथ व्यवहार में ला रहे हैं। जहाँ तक आवश्यक हो अंग्रेज़ी या ज़ूर्दू आदि के शब्दों का भी प्रयोग करना चाहिए मगर इतना सर्वदा ध्यान रहे कि उससे हिन्दी की मूल संरचना सुरक्षित रह सके।

उपरोक्त संक्षिप्त विवेचन से यह भली प्रकार सिद्ध हो जाता है कि हिन्दी में कार्य करना जरा सा भी कठिन नही है। बस मात्र शुरूआत भर करने की आवश्यकता है। यदि किसी कार्य को करने की धारणा मन में दृढ़ हो जाए तो साधन और सुविधाएँ स्वंय जुड़ती चली जाती है। हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है अतः इसमें कार्य करना हमारे लिए गौरव की बात होनी चाहिए। इसके प्रयोग के साथ हमें राष्ट्रीय स्वाभिमान जुड़ा हुआ है मगर बड़े दुःख की बात है कि हम में से कुछ लोगों ने इसके प्रयोग को एक हीन भावना के साथ जोड़ने का प्रयास किया है। यही वह भाषा है जिसे साधुओं, सन्तों, गायकों, धर्म प्रचारकों, समाज सुधारकों तथा क्रान्तिकारियों और हमारे अग्रणी नेताओं ने अपनाया था। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने इसी भाषा में अपने क्रान्तिकारी ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' की रचना की तथा इसे समूचे भारत की एकता का सूत्र बताया। राजाराम मोहनराय, केशव चन्द्रसेन, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, पुरुषोत्तम दास टण्डन, सरदार बल्लभ भाई पटेल, डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद, लोकनायक जयप्रकाश नारायण आदि अनेक नेताओं ने हिन्दी को राष्ट्र के गौरव का प्रतीक माना है। राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी ने इसके माध्यम से आज़ादी की पूरी लड़ाई लड़ी तथा राष्ट्रभाषा के रूप में प्रचारित–प्रसारित किया। यही वह जनभाषा है जिसे स्वतन्त्रता के बाद 14 सितम्बर, 1949 को राजभाषा के रूप में संविधान में स्थान मिला। हिन्दी की उत्कृष्टता के बारे में होलैण्ड के विद्वान् श्री गोदार्द हेंद्रिक स्खोक्वर का कहना है– 'हिन्दी एक सरल भाषा है। उसका साहित्य भी समृद्ध है। यही नहीं उसे बोलने वालों की संख्या भी बहुत बड़ी है। अतः मेरी दृष्टि में हिन्दी के संयुक्त राष्ट्र की एक भाषा के रूप में स्वीकार कर लिया जाना चाहिए।' हिन्दी के महत्त्व को अंगीकार करते हुए अंग्रेज़ी का मोह छोड़कर हमें अब हिन्दी में ही अपना कार्य करने के लिए कलम उठा लेनी चाहिए। निरन्तर अभ्यास ही है जो व्यक्ति को सफलता प्रदान करता है अतः हिन्दी में कार्य करने की झिझक और भय को दूर भगा कर प्रत्येक नागरिक को आज से, बल्कि अभी से अपना प्रत्येक कार्य हिन्दी में आरंभ कर देना चाहिए क्योंकि हिन्दी का कार्यान्वयन राष्ट्रभक्ति और सम्मान के साथ जुड़ा हुआ है।

महादेव, सुन्दर नगर,
जिला मण्डी (हि. प्र.) – 175018

यक्ष-युधिष्ठिर संवाद

● राम निवास 'गुणग्राहक'

यक्ष का प्रश्न- किं स्विद् गुरुतरं भूमेः किं स्विदुच्चतरं चखात्।

किं स्विच्छीघ्रतरं वायोः किं स्विद् बहुतरं तृणात!! 56

हे युधिष्ठिर! भूमि से बड़ा (गुरुतर) और आकाश से ऊँचा, वायु से शीघ्रगामी और घास से अधिक होने वाला पदार्थ क्या है?

युधि. का उत्तर- **माता गुरुतरा भूमेः खात् पितोच्चरस्तथा।**

मनः शीघ्रतरं वाताच्चिन्ता बहुतरी तृणात्।। 57

युधिष्ठिर ने कहा- हे यक्ष पृथ्वी से भी अधिक गुरुतर अर्थात् महनीय, पूजनीय माता है। आकाश से उच्चतर (बड़ा), महान् पिता है। वायु से भी अधिक तेज वाला मन है तथा चिन्ता घास से भी अधिक होने (फैलने) वाली है।

महाराज युधिष्ठिर ने जो उत्तर दिए, उनकी सत्यता और व्यावहारिकता शास्त्र-वचनों से प्रमाणित है। सर्वप्रथम वेद की बात करें तो अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त का- **'भूमि माता पुत्रोऽहं पृथिव्याः'** वचन सब जानते हैं। इसमें कहा है भूमि मेरी माता है और मैं इस पृथ्वी का पुत्र हूँ। ऋग्वेद में भी माता के समान भूमि को **'मातुष्पदे परमेशुक्र'** (5.43.14), तथा भूमि के समान माता को माना है। **'माता पृथिवी दुर्भतौधात्'** (5.43.14)। पृथ्वी को माता क्यों कहा गया है, इसे समझने के लिए माता शब्द का अर्थ समझना होगा। माँ शब्द **'मङ्निर्माणे'** धातु से बनता है। हमारे शरीर के निर्माण में भूमि की और जननी माता दोनों की महती भूमिका होती है। तैत्तरीय उपनिषद् (ब्रह्मानन्द वल्ली-1) का प्रसिद्ध वचन है-"आकाशाद्वायुः वायोरग्निः अग्नेरापः अद्भ्यो पृथिवी पृथिव्या ओषधयः ओषधयोऽन्नम् अन्नाद्रेतः रेतसो पुरुषः"। इस उपनिषद्-वचनानुसार पृथ्वी से औषधि, औषधि से अन्न, अन्न से वीर्य और वीर्य से पुरुष की उत्पत्ति बताई है। निःसन्देह पृथ्वी के औषधि अन्न आदि घटक द्रव्य हमारे शरीर के मूलभूत कारक हैं। अगर माँ की बात करें तो किसी कवि ने हमारे जन्म और जीवन के निर्माण में माँ की भूमिका को बड़े मार्मिक शब्दों में प्रकट किया है-

आस्तां तावदियं प्रसूत समये दुर्वार शूल व्यथा।
नैरुच्ये तनुशोषणं मलमयी शैया च सांवत्सरी।।
एकस्यापि न कष्ट भार भरणं क्लेशस्य यस्या क्षमो।
दातुं निष्कृति उन्नतोऽपितनयः तस्यै जनन्यै नमः।।

अर्थात् प्रसव काल की दुर्निवारणीय व्यथा की बात न भी करें तो गर्भावस्था में भोजन के प्रति अरुचि से शरीर सूख जाता है। (गर्भस्थ शिशु-शरीर का तब भी पोषण होता रहता है, यह भी एक प्रकार का शोषण है)। लगभग एक वर्ष (संवत्सर) तक मलमूत्रमयी शैया पर माँ सोती है। इनमें से एक भी कष्ट ऐसा नहीं जिसे बिना भारी क्लेश भोगे सहन किया जा सके। पुत्र-पुत्रियाँ चाहे कितने ही उन्नत व सामर्थ्यवान होकर इस मातृऋण से उऋण होना चाहें, माता को कितनी ही सुख-सुविधा दें, फिर भी ऋणमुक्त नहीं हो सकते, ऐसी जननी माँ को नमन है। चूँकि जननी माँ हमारे शरीर-निर्माण के लिए महनीय व्यथा-वेदना भोगती है, हमारे व्यक्तित्व का निर्माण करती है, हमारी सुख-सुविधाओं के लिए अपनी सुख-सुविधाओं का त्याग करती है। उसका यह तप-त्याग और बलिदान जननी माँ को पृथ्वी माँ से गुरुतर, महनीय, पूजनीय सिद्ध करता है। ऋषि दयानन्द लिखते हैं- 'जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुँचता है, उतना किसी से नहीं'। "गुरुणां माता गरीयशी" जैसी घोषाणाएँ माँ के गौरव-गान को ऊँचाई प्रदान करती है। **'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयशी'** की गहराई को अन्तर्मन से अनुभव करने वालों के लिए अधिक कुछ कहने की आवश्यकता नहीं।

पिता को आकाश से भी उच्चतर बताने के लिए शास्त्र वचनों की कोई कमी नहीं, मगर मेरा मन एक मार्मिक घटना देकर पिता की भावनाओं को पाठकों तक पहुँचाना चाहता है। मुझे आयु वृद्ध सज्जनों से मिलकर कुछ प्रेरक घटनाएँ सुनने-समझने के प्रति विद्यार्थी जीवन से ही लगाव रहा है। ऐसी ही मर्मस्पर्शी घटना पाठक पढ़ें और पिता होने का भाव समझने का प्रयास करें। हमारे निकटवर्ती गाँव के सज्जन ने बताया कि गाँव का एक मजदूर पैतृकपरम्परा से घर बनाने का काम करता था। पिता ने अपने युवा पुत्र को भी कारीगर बनाकर घर बनाने के काम में लगा दिया। उनके पास थोड़ी पूँजी जमा हो गई तो उन्होंने अपना घर पक्की ईंटों से बनाना चाहा। जब वे अपना घर बना रहे थे तो एक दिन पिता ने दोपहर में काम बन्द करके भोजन विश्राम के लिए पुत्र से कहा। पुत्र बोला आप नहाकर-धोकर भोजन कर लो, मैं थोड़ा सा काम शेष है, वह पूरा करके आ जाऊँगा। स्नान व भोजन करके पिता ने देखा कि तेजधूप में भी उसका युवा पुत्र काम पर लगा है। पिता ने कहा, पुत्र काम बन्द कर दे। तेज धूप है, सायं काल धूप ढलने पर पुनः काम पर लग जाएँगे। पुत्र ने पिता के ऐसे आग्रह को कईं बार अनसुना कर दिया तो पिता का हृदय व्याकुल हो उठा। उसने एक-दो बार और कहा मगर पुत्र ने वही उत्तर दिया, पिता जी! थोड़ी देर ठहर जाओ, अभी आता हूँ। पिता का हृदय अधीर हो उठा, तेजधूप में भूखे पेट पुत्र को पसीने से लथपथ होकर काम करते देखना सम्भवतः किसी पिता के लिए सहज न होगा। अचानक उसे एक युक्ति सूझी, वह अपने कच्चे कोठे में गया और अपने पुत्र के छोटे-से पुत्र को कन्धे पर बिठाकर बाहर आया और धूप में खड़ा हो गया थोड़ी देर बाद काम करते पुत्र ने अपने पिता की ओर देखा तो एकदम काम बन्द करके पिता से बोला- पिताजी! आप इस छोटे बच्चे को लेकर धूप में क्यों खड़े हैं? इसे घर पंखे की हवा में सुला दो। पिता ने कहा- जब तक मेरा पुत्र धूप में काम करता रहेगा, तब तक तेरा पुत्र भी धूप में रहेगा। यह सुनकर उस युवक ने तुरन्त काम बन्द कर दिया।

पाठक वृन्द! इस घटना पर टिप्पणी करने या कुछ भी लिखने की कोई आवश्यकता नहीं। पिता के हृदय की उच्चतर भावनाओं को कोई पुत्र, पिता बनने के बाद ही समझ पाता है, उससे पहले वह पिता की उच्चता व महत्ता को लाख चाहकर भी समझ नहीं पाता। मन की गति की बात करें तो यजुर्वेद के शिव संकल्प मंत्रों का पहला ही मंत्र - **'यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदुसुप्तस्य तथैवैति।'** मन की गति पर अच्छा प्रकाश डालता है। गीता की बात करें तो अर्जुन मन को अति चञ्चल, बलवान और वायुवत् दुर्निग्रह बताता है तो श्री कृष्ण भी यही कहते हैं- **'असंशयं महाबाहो मनोदुर्निग्रहं चलम्'** (गी. 6.35) हे अर्जुन! निःसन्देह मन बहुत गतिमान है, इसका निग्रह (रोकना) बहुत कठिन है। यहाँ मुझे पाठकों के लिए मन की तीव्र गतिशीलता के सम्बन्ध में एक उपयोगी बात साझा करनी है। मन को हमारे ऋषियों ने उभय इन्द्रिय माना है। मनु महाराज का मानना है-

"एकादशं मनोज्ञेयं स्वगुणेन उभयात्मकः।
यास्मिन जिते जितावेतौ भवतः पंचकौ गणौ।।"

अपने विशिष्ट गुणों के कारण यह ज्ञानेन्द्रिय भी है और कर्मेन्द्रिय भी। इस एक मन के जीत लेने से पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कार्मेन्द्रियाँ दोनों जीते हुए समझे जाते हैं। पाठक वृन्द! मनुजी के वचनो के आलोक में मन की महिमा सरलता से समझी जा सकती है। मन ज्ञानेन्द्रिय भी है और कर्मेन्द्रिय भी। श्री कृष्ण महराज का मानना है कि मनुष्य बिना कर्म किए क्षण मात्र भी नहीं रहता अर्थात् वह प्रतिफल कुछ न कुछ कर्म करता ही रहता है। (नहि कश्चित क्षणमयि जाततिष्ठति अकर्मकृत-3.5) अब विचारिए हमारी ज्ञानेन्द्रियों व कर्मेन्द्रियों के एक क्षण भी न रुकने वाले कार्य-व्यापार के संचालन में सतत् सक्रिय रहने वाला मन वायु से भी अधिक वेगवाला न होता तो हमारा लौकिक व्यवहार और योग साधना जैसी रहस्यमयी तथा सूक्ष्म क्रियाएँ भला कैसे सम्पन्न होतीं।

'यज्जाग्रतो दूरमुदैतिदैवं....' से लेकर **'सुसारथि रश्वानिव....'** तक के शिव संकल्प मन्त्रों पर विचार करके देखें कि मन कैसी-कैसी विलक्षण शक्तियों का धनी है। शतपथ में लिखा है - **'कामः संकल्पो विचित्सा श्रद्धाऽ श्रद्धा धृतिः अधृतिः हीः धीः भीः इत्येतत् सर्वं मन एव'** (14.43.1) अर्थात् इच्छा संकल्प ऊहापोह श्रद्धा, अश्रद्धा, धैर्य, अधैर्य, लज्जा, ज्ञान, भय सब मन के कार्य हैं। मन को प्राणों का अधिपति माना है-**'मनो वै प्राणानां अधिपतिः'** (14.3.2.3) अधिक क्या कहें याज्ञवल्क्य के शब्दों में मन से ही आत्मा की प्रतिष्ठा प्रकट की है- 'मनसि हि अयमात्मा प्रतिष्ठित' (6.7.1.21) कठोपनिषद् के ऋषि के शब्दों में तो ईश्वर की प्राप्ति का मुख्य साधन मन ही है -'मनसै वेद माप्तव्यम्' (2.1.11) पाठक तनिक विचार करें कि इन सब विलक्षण कार्यों को आयु भर बिना थके निरन्तर करते रहने वाले मन को परमात्मा अपार गति वाला न बनाता तो हम ये सब काम कैसे कर पाते। मन सच मे बहुत विलक्षण है।

मो. 7597894991

☞ पृष्ठ 06 का शेष

स्वाध्याय का स्वरूप...

वेद सम्मिलित हो। उत्तमतया सब ओर से वेदसहित अधिकृत आद्योपान्त अध्ययन ही स्वाध्याय कहलाएगा। सु+आ+अध्याय (वेद) **सुष्ठुतया आवृत्य वेदः स्वाध्यायः।**

याज्ञिकों में उपाकर्म का बड़ा महत्त्व है, जिसे आजकल श्रावणी उपाकर्म कहने लगे हैं। श्रावणी शब्द का प्रयोग तो इसलिए किया जाने लगा कि उपाकर्म–विधि श्रावण की पूर्णिमा से अथवा श्रावण मास की पंचमी से बात की जाती है। उपाकर्म का मूल अर्थ हैं– उद्घाटन करना या आरम्भ करना। इस शब्द से यह तो प्रकट हो गया किसी कर्म का आरम्भ उपाकर्म है। परन्तु किसका? अतः इसे स्पष्ट करने के लिए उपाकर्म को आश्वलायन–गृह्य–सूत्रकार ने और पारस्कर–गृह्य–सूत्रकार ने क्रमशः अध्यायोपाकरण या अध्यायोपाकर्म नाम दे दिए। यहाँ अध्याय शब्द का अर्थ सिवाय वेद के और क्या हो सकता है? आश्वलायन–गृह–सूत्र के 3/5/1 पर नारायण ने उपाकरण के विषय में लिखा है– **अध्ययनमध्यायस्तस्योपाकरणंप्रारम्भोयेन कर्मणा तदध्यायोपाकरणम्।** याज्ञवल्क्य स्मृति 1 । 142 पर मिताक्षरा में लिखा है– **'अधीयन्ते इत्याध्याया वेदास्तेषां संस्कारकमुपाकर्माख्यं कर्म'** यहाँ तो स्पष्ट ही अध्याय शब्द का अर्थ वेद किया है। अतः प्रमाणित हुआ कि अध्याय शब्द का अर्थ वेद, तो स्वाध्याय का निर्वचन दो प्रकार से होगा–

(1) सुष्ठु आवृत्य अध्यायः वेदाध्ययनम् स्वाध्यायः।

उत्तमता के साथ, हर पार्श्व से वेदाध्ययन ही स्वाध्याय है।

(2) सुकृताय आवृत्य अध्यायोऽधीतिः स्वाध्यायः।

सुकृत अर्थात् पुण्य के लिए हर पार्श्व से, वेदाध्ययन ही स्वाध्याय है।

यदि स्वाध्याय शब्द का विग्रह **"स्वस्य अध्यायः =स्वाध्यायः"** ऐसा करें तो इसका अर्थ होगा, अपना अध्ययन, अर्थात् अपने–आपका अध्ययन, आत्म–निरीक्षण, आत्म–चिन्तन। यह अर्थ प्रस्तुत विषय से सम्बन्धित नहीं है और न यहाँ उसका स्थान ही है। इसके लिए हम पृथक् ही 'चिन्तन सर्वस्व' नामक लघु पुस्तिका लिखने का विचार रखते हैं। यहाँ तो **"स्वस्य अध्यायः=स्वाध्यायः"** में अध्याय शब्द का अर्थ वेद करने के प्रसंग में यह आशय निकालना अभीष्ट है कि वेद को अपना बना लेना स्वाध्याय है, अथवा ऋग्वेदी, यजुर्वेदी आदि उपाधिधारी व्यक्ति परम्परया ऋगादि वेदों को अपना बना लें, तब वह स्वाध्याय कहलाएगा। **"अधीयत इति अध्यायो वेदः, स्वस्य अध्यायः स्वाध्यायः, स्वपरम्परागत–शाखेत्यर्थः।"** **यहाँ तक निम्नलिखित बातें स्पष्ट हो गई–**

क. – स्वाध्याय परम–श्रम है।
– स्वाध्याय परम–तप है।
– स्वाध्याय परम–धर्म है।
– स्वाध्याय परम–स्कन्ध है।
– स्वाध्याय परम–योग है।
– स्वाध्याय परम–यज्ञ है।
– स्वाध्याय परम–रस है।
– स्वाध्याय परम–दीक्षा है।
– स्वाध्याय परम–निधि है।

ख. – अध्याय शब्द का मूल अर्थ है पाठ्य–ग्रंथ में व्यक्ति की अबाध गति होना। अध्याय शब्द का परमार्थ वेद है।

ग. – स्वाध्याय शब्द का अर्थ उत्तमता के साथ हर पार्श्व से वेद में अबाध गति।

अक्षम्य अपराधः

हम ऊपर मनु, याज्ञवल्क्य, आदि के प्रमाण से लिख आये हैं कि स्वाध्याय में अनध्याय नहीं होना चाहिए। इसमें छूट नहीं, इसमें नागा नहीं। आचार्य दीक्षान्त–भाषण में सावधान करते हुए कहता है, कि स्वाध्याय और प्रवचन में कभी प्रमाद न करना चाहिए। प्रिय स्नातक, अब तुम गृहस्थ आश्रम में प्रविष्ट होओगे। सम्भवतः प्रमाद–वश तुमसे कुछ भूलें हो, परन्तु ध्यान रखना कि स्वाध्याय में कभी प्रमाद न आने पाये। इसमें प्रमाद करने का बड़ा भयंकर परिणाम होगा।

शतपथकार लिखते हैं कि इसमें नागा करने से उतने ही भयंकर परिणाम सम्भव हैं जितने कि इस सृष्टि में अग्नि, वायु, जल, सूर्य, चन्द्रमा नक्षत्रादि के अपना–अपना कार्य छोड़ देने से सम्भव हैं। क्या कभी इन्हें अपने व्रत में नागा करते देखा–सुना है? ये निरन्तर व्रतनिष्ठ रहते हैं। शतपथकार लिखते हैं–

यन्ति वा आपः। एत्यादित्यः। एति चन्द्रमाः। यन्ति नक्षत्राणि। यथा ह वा एता देवता नेयुर न कुर्युः एवं हैव तदहर्ब्राह्मणो भवति यदहः स्वाध्यायं नाऽधीते। तस्मात्स्वाध्यायो अध्येतव्यः। (शतपथ 11/5/7/1)। देखो, ये नदियाँ निरन्तर बहती हैं, रुकती नहीं। सूर्य समय पर उदय होता है। चन्द्रमा नियमित गति से चलता है। समस्त नक्षत्र–मण्डल नियमित चल रहा है, एकनिष्ठ अपने व्रत का आरूढ़ है। जैसे ही ये सभी देव यदि कभी रुक जाएँ, नियम भंग कर दें, वैसे ही ब्राह्मण का वह दिन होगा जिस दिन वह स्वाध्याय–नियम का भंग कर देगा।

शतपथ तथा यज्ञावल्क्य तो स्वाध्याय में नागा करने से उतनी ही बड़ी हानि मानते हैं जितनी कि नदियों के रुकने से हानि होने की सम्भावना होती है, जितनी कि चन्द्रमा और नक्षत्र–मण्डल के अपनी चाल छोड़ देने से हानि होने की सम्भावना होती है। जिस दिन ये देवगण अपना व्रत भंगकर ठहर जाएँगे, उस दिन प्रलय हो जाएगी। इसी प्रकार व्यक्ति के स्वाध्याय व्रत को भंग करने का दुष्परिणाम होगा कि परिवार, समाज और राष्ट्र के शील, वृत्त, चरित्र का प्रलय हो जाएगा। यह अक्षम्य अपराध है। व्रत को अक्षुण्ण रखने के लिए चाहे एक वाक्य–मात्र क्यों न हो, उसे ही दोहरा लें, नागा न करें। शतपथकार लिखते हैं– **"तस्माद् अपि ऋचं वा यजुर्वा साम वा गाथां वा कुंब्यां वा अभिव्याहरेद् व्रतस्य अव्यवच्छेदाय"**– श. ब्रा. (11/5/6/9)। ऋचा ही सही एक यजुर्मन्त्र ही सही, एक साममन्त्र ही सही, एक गाथा ही सही, व्रत की अखण्डता के लिए कोई एक श्लोक ही दोहरा लें, परन्तु स्वाध्याय में नागा न आने दें। स्वाध्याय–सत्र की अखण्डता बनी रहनी चाहिए।

आश्वलायन–गृह्यसूत्र (3/3/1) ने स्वाध्याय के लिए निम्न ग्रंथों के नाम लिखे हैं– ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, ब्राह्मण, कल्प, गाथा, नाराशंसी, इतिहास एवं पुराण। किन्तु मनोयोगपूर्वक जितना स्वाध्याय किया जा सके उतना ही करे। बस स्वाध्याय–सत्र को अटूट रखे, उसमें व्यवधान न आने पाये।

शांखायन–गृह्यसूत्र (1/4) में ब्रह्मयज्ञ के लिए ऋग्वेद के बहुत–से सूक्तों एवं मन्त्रों के पाठ की बात कही है। अन्य गृह्यसूत्रों ने भी शाखा–भेद के अनुसार ब्रह्मयज्ञ के लिए विभिन्न मंत्रों के पाठ व स्वाध्याय की बात कही है। अन्य गृह्यसूत्रों ने भी शाखा–भेद के अनुसार ब्रह्मयज्ञ के लिए विभिन्न मंत्रों के पाठ व स्वाध्याय की बात कही है। याज्ञवल्क्यस्मृति (1/10/1) में लिखा है कि समय एवं योग्यता के अनुसार ब्रह्मयज्ञ में वेदों के साथ इतिहास एवं दर्शनग्रंथ भी पढ़े जा सकते हैं।

उपर्युक्त प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि वेद के अध्ययन के अतिरिक्त अन्य ग्रंथों का अध्ययन भी स्वाध्याय है। समय के अनुसार स्वाध्याय के नियमों में शिथिलता लायी गयी और एकमात्र वेदाध्ययन को ही स्वाध्याय न कहकर अन्य ग्रंथों को भी समाविष्ट कर लिया गया। यहाँ तक कि उसमें वे छः वेदाङ्गों आश्वलायनादि–श्रोतसूत्रों, निरुक्त, छन्द, निघण्टु, ज्योतिष, शिक्षा, पाणिनि–व्याकरण के प्रथम सूत्र, याज्ञवल्क्य (1/1) के प्रथमश्लोकार्थ, महाभारत (1/1/1) के प्रथम श्लोकार्थ, न्याय, पूर्वमीमांसा, उत्तरमीमांसा के प्रथम सूत्र आदि को भी समाविष्ट कर लिया गया। इस ढील देने का यही प्रयोजन दिखता है कि किसी भी अवस्था में स्वाध्याय–सत्र की अखण्डता में अन्तर न आने पाए, इसमें व्यवधान न हो।

शतपथकार ने यही बात, स्वाध्याय–यज्ञ को देवयज्ञ का रूप देकर समझाई है। जहाँ उसके वाणी, मन, चक्षु, हृदयादि अंगों को जुहू, उपभृत, ध्रुवा, स्रुव आदि पात्रों की संज्ञाएँ दी हैं, वहाँ उसने ऋग्, यजुः, साम, अथर्वादिग्रंथों को दूध, घृत, सोम, स्नेह, मधु की आहुतियाँ स्वीकार किया है। जिस प्रकार देवयज्ञ में देवों को तृप्त करने के लिए दूध, घृत, सोमादि पदार्थों की आहुतियाँ देना आवश्यक है, उस प्रकार स्वाध्याय–यज्ञ में दूध, घृत, सोमादि की आहुतियाँ देना अनिवार्य है। वे दूध आदि पदार्थ वहाँ क्या हैं, जिनकी आहुतियाँ देने से देव तृप्त हो सकते हैं? तो लिखा है–

पय–आहुतयो ह वा एता देवानां – यद् ऋचः

आज्यः–आहुतयो ह वा एता देवानां – यद् यजूंषि

सोम–आहुतयो ह वा एता देवानां – यत् सामानि

मेद–आहुतयो ह वा एता – यद् अथर्वाङ्गिरसः

मधु–आहुतयो ह वा एताः देवानां – यद् अनुशासनानि, विद्या, वाकोवाक्यम्, इतिहास–पुराणम्, गाथा, नाराशंस्यः (शतपथ. 11/5/6/4–9)

उपर्युक्त प्रमाण से यह सिद्ध हुआ कि जिस प्रकार द्रव्य–यज्ञ में पय, आज्य, सोम, मेद (स्नेह) और मधु की आहुतियाँ देव–तर्पणार्थ दी जाती हैं, उसी प्रकार स्वाध्याय–यज्ञ में ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, नाराशंसी की आहुतियाँ दी जाती है, जिनके देने से देव तृप्त होते हैं। इससे जहाँ यह पता चला कि देवयज्ञ की भाँति स्वाध्याय भी यज्ञ है, वहाँ यह ज्ञात हो गया कि किन–किन ग्रंथों का स्वाध्याय करना चाहिए– ऋगादि चारों वेदों का और अनुशासन (वेदांग), विद्या (सर्पविद्या एवं देवविद्या–छान्दोग्य 7/1/1), वाकोवाक्य (ब्रह्मोद्यनामक धार्मिक वाद–विवाद), इतिहास, पुराण, गाथाएँ, नाराशंसी (व्यक्तिगत आत्मकथाएँ तथा जीवनचरित जिसमें नरों का शंसन हो, प्रशंसा हो।

उपर्युक्त प्रसंग का भी यही आशय है कि जिस प्रकार अग्निहोत्र नैत्यक कर्तव्य है, तद्वत स्वाध्याय–यज्ञ भी नैत्यक कर्तव्य है। जिस प्रकार देवयज्ञ में प्रतिदिन आहुति–दान आवश्यक है, तद्वत् स्वाध्याय–यज्ञ में भी ऋगादि का अध्ययनरूप पय–आज्यादि आहुति–दान आवश्यक है। इसमें नागा न होना चाहिए।

स्वाध्याय सर्वस से साभार

Arya Samaj's Contribution During Freedom Movement

K.C. Yadav & K S Arya

Being a modern organization, the Arya Samaj took to modern mass media for reaching the masses effectively. To begin with, it published a large number of books, pamphlets tracts, posters etc., for the propagation of its principles and ideas. Of these, the works of Dayanand Saraswati, (especially his *magnum opus the Satyarth Prakash*) were most popular: almost every literate Arya Samajist read it daily. It is pointed out by contemporary British intelligence officers that no other book done in that period contained such rich material for arousing political awakening and national consciousness as the *Satyarth Prakash*. For substantiation, they reproduced following excerpts from the book:

The sixth chapter of the *Satyarth Prakash* deals with the science of government. It is difficult to understand what was Dayanand's object in prescribing the form of government for the State unless it was for the guidance of the Indians when they secure independence. These directions are chiefly taken from the laws of Manu. The chapter closes with the invocation :

"May we in this world through God's mercy be privileged to occupy kingly and other high offices, and may He make us the means of advancing His eternal justice."

To the extent that it describes the Aryan system of government as a perfect one, the sixth chapter may be regarded as causing disaffection towards the British Government.

There are, moreover, references in this chapter to the necessity that the sovereign and ministers should be learned in the *Vedas*, and "born in *Swadesh* and *Swaraj*", that are difficult of other than literal interpretation. The eighth chapter contains the following passage:-

"At the present moment, let alone governing foreign countries, the Aryas through indolence, negligence and mutual discord and ill-luck, do not possess a free, independent, uninterrupted and fearless rule even over their own country. Whatsoever rule is left to them, is being crushed under the heel of the foreigner. There are only a few independent states left. When a country falls upon evil days, the natives have to bear untold misery and suffering. Say what you will, the indigenous native rule is by far the best, A foreign Government, perfectly free from religious prejudice, impartial towards all-the natives and the foreigners-kind, beneficent and just to the natives like their parents though it may be, can never render the people perfectly happy."

This extract was particularly quoted by the defence in the case King-Emperor versus Ala Ram, dated 26th November 1902, in the course of which the loyalty of the Arya Samaj was impugned by the defendant Ala Ram, a preacher of the Sanatan Dharma.

Chapter X of the *Satyarth Prakash* contains two objectionable passages:

(1) The causes of foreign rule in India are mutual feud, differences in religion,... It is only when brothers fight among themselves that an outsider poses as judge.... Mutual feud ruined Kauravas, Pandavas and Yadavas in the past. The same fatal disease is still clinging to us.... The Aryas are still treading the wicked path of the despicably low Duryodhana, the destroyer of his race.... May God in His mercy rid us of this dreadful disease.

(2) When the Aryas were in power these most useful animals (cows) were never allowed to be killed. Consequently man and other living beings lived in great peace and happiness.... But, since the meat-eating and wine-drinking foreigners—the slayers of kine and other animals—have come into this country, and become the ruling power, the troubles and sufferings of the Aryas have since been on the increase. Either of these is calculated to excite feelings of disaffection towards the British Government,

Chapter XI contains a passage:—"There have been other mighty rulers who were the sovereign lords of the whole earth such as Sudyumna, Bhuridyumna.... What a pity the descendants of these Aryas are being crushed under the heel of the foreigner."

This particular passage was the one which formed the subject of the indictment for seditious speaking against the Arya Samaj preacher Daulat Ram at Jhansi which resulted in his conviction in 1908 under Section 109, Criminal Procedure code.

The Satyarth Prakash in abusing the Christians identifies the Government and the Christians, and the following two extracts from the chapter on Christianity are calculated, if not intended, to excite feelings of enmity in Indians towards Government:—

"If a white man kills a black man they generally adjudge him to be not guilty out of their partiality and acquit him of all blame.

It is on this account that the Christians fall upon the property of foreigners as a thirsty creature upon water, a hungry man upon food.

The book contains hundreds of such references, Like *guru* like disciple: the other works done by Arya Samajists also contained material of political nature. The following example, an excerpt from the life of Mazzini written by Lala Lajpat Rai, should be sufficient to bring home this truth:

It is unnatural for a nation to remain under another nation.

Foreign yoke is tolerated by a people under very strong compulsion. Nature has desired that every nation should try to promote the welfare of its own land of birth and protect it from foreign attack and tyranny. Looked at from this standpoint, an alien Government, however generous, independent and good it may be, is against the laws of nature and means a condition of slavery for the subject race. If it is evil and against the laws of nature to make a man a slave of another, it is also to make a nation slave, to rule over it against the wishes of it, and it can never be naturally right to do, and if the subject race does not understand this, the reason is that long slavery has killed its sense of respect, and its low spiritualness and narrowness of ideas have made it unable to grasp this grand but simple truth of nature. If the English had not come to India, it would not be surprising if the Hindus had gained possession over all India.

We must remember that unless we show by our deeds and acts that we are seeking to obtain independence we wont get an inch of it, however many efforts we may make. When the Government will come to know that we are not only worthy of being given independence but are in a position that we shall have independence anyhow, then believe there is no earthly power that can keep independence away from us. The second stage is that we should think of the means to achieve independence. One who knows how to be free from slavery, no one can keep him a slave* We have not the same obstacles in our way which the lovers of Italy had to face.

Most of the books, pamphlets, tracts or posters written by Arya Samajists of those times invariably contained some political message, some patriotic observation or some hint of *swadeshi* and *swaraj*.

A large number of journals, periodicals and newspapers were also published for the propagation of the Samaj ideals during this period. Of these, the important ones were the *Arya darpana* (Shahjehanpur); *Bharatasudashapravartaka* (Farrukhabad); *Deshhiteshi* (Ajmer); *Aryavarta* (Bhawanipur—Calcutta); *Arya Siddhanta* (Prayag); *Paropakari* (Ajmer); *Timirnashaka* (Kashi); *Brahmanahitakari* (Kashi); *Bharatuddhar* (Jagraon—Punjab); *Vedapracharak* (Jagraon-Punjab); *Vaidik Dharma* (Muradabad);

Vedaprakasha (Meerut); *Bharatuddharaka* (Meerut); *Aryamitra* (Luckoow); *Aryasevaka* (MadhyaPradesha); *Saddharmapracharaka* (Jullundur); *Navajiwana* (Kashi); *Bhaskara* (Meerut); *Arya* (Lahore); *Aryamaryada* (Jullundur); *Aryamartanda* (Ajmer); *Aryajagata* (Lahore); *Sarvadeshika* (Delhi); *Digvijaya* (Hyderabad); and *Aryabhanu* (Hyderabad).

These periodicals, besides the socio-religious programme, carried political message to the thinking people.

Besides this, the Samajas employed *upadeshakas* (preachers)tocarrytheirmessage to all nooks and crannies of the country. As these people had served a highly important purpose, a detailed account of them is required. To begin with, the *upadeshakas* were not professionals. The members of the *samajas* who were educated and well-versed in the vedic lore and the programme and principles of their organisation, snatched time out of their routine work and did this job. Some prominent *upadeshakas* of the non-professional type of this period were : Mani Ram, Atmanand, Ishwaranand, Sahajanand, Ramanand (later Shankaranand), Nityanand, Vishwesharanand, Satyanand, Prakashanand, Lakshmidatt Pandey etc,

After 1880s came paid, full time *upadeshakas.* Trained in the art of public communication, they did a lot of useful work day in and day out. Among these *upadeshakas* were Mani Ram (Later Arya Muni), Shiv Shankar, Mehta Jaimani, Yogendrapal, Dhani Ram, Sachidanand Sharma, Tulsi Ram Misri, Devdatt Sharma, Tulsi Ram Svani, Badri Datt Sharma, Shankranand, Amin Chand, Nawal Singh, Kalu Ram, Basti Ram, Tej Singh, Bhishma, Mai Bhagwati, Baldev Singh Verma, Muni Lal Sharma, Prayagdatt Awasthi and Kanwar Sukhlal.

Though full time *upadeshakas* had become available now, yet the Arya activists also spent most of their time sharing their views with the people and influencing them. In this category may be mentioned the names of Gurudatt Vidyarthi, Lajput Rai, Hans Raj, Sam Das, Munshi Ram, Jiwan Das, Durga Prasad, Chamupati, Ramdeva, Parmanand, Lekh Ram, Kirpa Ram (later Darshanananda), AtmaRamAmritsari,Shivananda, Sarvadanand, Ganpati Shartoa and Rambhaj Dutt.

These *upadeshakas*, whether professional or non-professional, brought a great deal of political awareness and national consciousness to the masses. A few excerpts from a U.P. government intelligence report may be pertinent here to substantiate the point.

1. It is recorded by the Punjab police that, when Lala Munshi Ram with Pandit Ram Bhaj Datt of Amritsar was canvassing for subscriptions for the Gurukul at Gujarat, Sialkot and Gujranwala in 1899, he spoke against Government in a very mischievous tone, saying among other things that sepoys were foolish enough to enlist on Rs. 7 or Rs. 8 per mensem to be killed, but after being carefully taught in the Gurukul they would know better. It is also said that Munshi Ram preached in a similar strain in 1903 at Jhang in the Punjab in the same cause.

2. Daulat Ram, an Arya Samaj preacher, was proved to have made attempts to create disaffection among the sepoys at Jhansi, and the Court took the view that an extract from the Satyarth Prakash, reproduced in the fourth chapter, which Daulat Ram read to an audience including sepoys, was calculated to excite disaffection. The Magistrate found the charge proved, and on the 24th September 1908 bound him over for one year under section 109, Criminal Procedure Code, The matter was taken up by the Arya Pratinidhi Sabhas of these provinces and of the Punjab, but the judgement was upheld.

3. 1909 saw Pandit Bhoj Dat visiting Bengal, and his behaviour there caused such apprehension that it was necessary for the Commissioner of Police to issue a notification forbidding him to address any meeting in Calcutta.

4. Pandit Prag Dat of Hardoi, a paid lecturer of the Arya Pratinidhi Sabha, has been reported as on more than one occasion lecturing at Arya Samaj meetings on political subjects. In May 1908 he commended the example of the Bengalis to his hearers at an Arya Samaj meeting at Hardoi, and showed that they were getting whatever they wanted by agitation and combination.

5. Pandit Bishan Dat of Mirzapur, a prominent swadeshi propagandist of these provinces has been closely associated with the Arya Samaj since 1902, He spoke at a meeting in Bombay in 1907 on the same platform with Lajpat Rai and Munshi Ram.

6. 1908 saw in Bundelkhand, in Mirzapur and in Gonda districts Lala Lajpat Rai's famine agents at work. These men were received with honour by the Arya Samajas of all the towns they visited, and when in the villages they lost no opportunity of preaching the doctrines of the Arya Samaj. One of these agents disclosed that their real mission was to educate the villagers and to teach them to claim their rights. The amount of relief they gave was comparatively infinitesimal.

7. At a meeting at Agra in 1905 a Punjabi lecturer named Manohar Lal pointed out the necessity for union among Hindus and said it would enable Indians to regain possession of their country, A similar lecture was delivered by one Todi Mal, at a meeting at Alampur in the Dadon circle of the Aligarh district in 1908.

8. During May and June 1907, the political suspects Parmanand (C.I.D. no. P. 4) and Brahmanand (C.I.D. no. B-8) were observed approaching sepoys on leave at Hardwar and preaching in a manner to excite disaffection.

Although the subjects of discussion at the meetings of the (Bijnor) samaj are usually reported to be confined to religious and social matters, the *swadeshi* movement is sometimes alluded to and politics are occasionally discussed. The Mandawar Samaj is reported to interest itself more with political than with religious affairs.

These are only a few instances reported from U.P. From other provinces similar instances could be had in hundreds.

These *upadeshakas* were, as indicated above, trained in the art of saying things in the most intelligible manner. They were well-versed in the idiom which the people followed. As a result, whatever they said was accepted by their audiences as scriptural truth, And, as already discussed, they never spared an opportunity to arouse the feelings of the people. They built mountains out of mole hills to arouse their audience, An illustration:

Lala Ganpat Rai, *upadeshaka*, reports the Arya *Gazette*, in its issue of 11 January 1900, writing from Kachewa Rorh (Rajputana) says that 'owing to the prevailing famine things have come to such a pass here that numbers of human corpses may be seen lying in the fields; men and women are dying from hunger and exposure to cold at night; and beasts of the jungle, dogs, etc, are fattening on the dead bodies of Hindus....

Dear reader, just imagine how the dead bodies of Aryas are being desecrated! Do you know that within a few days their bones will be sold to Ralli Brothers?

O God! thou art the only Protector of the degenerated Arya nation. Bless us that we may be able to save the Aryan children! Father, bless us that we may learn some spiritual lesson from this awe-inspiring scene, and rouse ourselves to afford succour to orphans!

The above account shows that Aryas employed modern means to spread the message of the Samaj to every part of the country. This message usually had some political content as was the case with the writings of their *guru*, Swami Dayanand Sarawswati. And the message was put across to the people in such a way that it straight reached their hearts and produced the desired results. This explains as to why thousands of Aryas joined the national movement under it influence. ❐

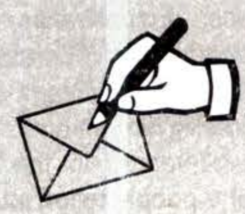

पत्र/कविता

लाख छिपाये नहीं छिपे, कर्म सामने आये

मैं और मेरा ईश्वर, दोनों भीतर साथ।
मैं भटकूँ बाहर फिरूँ, छोड़े उसका हाथ।।

भीतर बैठा देखता, हर पल ही समझाय।
पर मन स्वार्थ से भरा, कुछ समझ नहीं पाय।।

कर्म तेरे ही ले चलें, तुझे मंजिल की ओर।
दशा–दिशा पहचान चल, पावे अपना ठोर।।

निज स्वार्थ के काम से, चले पतन की ओर।
सब के हित के काम करे, चले शिखर की ओर।।

विचारों से शब्द बने, शब्द करम बन जाय।
सोच अपनी सुधार ले, करम सुधर तब पाय।।

मन में ईर्ष्या भाव हो, करम अधम बन जाय।
पर उपकार अगर करो, गति उत्तम कहलाय।।

प्रेम सेवा से करो, चलो ईश की ओर।
कार्य नफरत के करो, कभी मिले ना ठोर।।

विषय वासना में फसे, मकड़ी जाल बिछाय।
काम क्रोध को दूर कर, तभी निकल वह पाय।।

बिना करम फल चाहता, खाली ही रह जाय।
बिन सवारथ करम करे, मन चाहा वह पाय।।

दरपन तेरा कर्म है, मनोभाव दिखलाय।
लाख छिपाय नहीं छिपें, करम सामने आय।।

नरेन्द्र आहुजा ''विवेक''
6–2, जी. एच. 53, सेक्टर– 20,
पंचकूला, हरियाणा
मो. 9467608686

राम रहीम अब बनें महासंत

गुरमीत राम रहीम के नाम पर जितनी हिंसा और तोड़–फोड़ हुई है। उससे अंदाज लगाया जा सकता है कि उनके प्रति लाखों लोगों की कितनी अंध–श्रद्धा है। यह अंध–श्रद्धा कैसी है और कितनी है, इसका जितना अंदाज गुरमीत को है, उतना किसी को नहीं होगा (यहाँ मैं राम रहीम जैसे पवित्र शब्दों से संकोच कर रहा हूँ) गुरमीत की जिस बात ने मुझे सबसे ज्यादा प्रभावित किया वह यह कि अदालत ने उन्हें जब दोषी करार दिया तो वे कुछ बोले नहीं। उन्होंने जज को कोसा नहीं, गालियाँ नहीं दीं और कोई शाप वगैरह भी नहीं दिया। बस उनकी आँखों से आँसू टपकते रहे। क्या ये दुख और पश्चाताप के आँसू नहीं थे? जजों और सीबीआई के लोगों से भी ज्यादा उन्हें पता है कि उन्होंने कितने बलात्कार किए हैं, कितने व्यभिचार किए हैं और कितनी हत्याएँ की हैं। इन सब से इंकार करके वे झूठ बोल सकते थे लेकिन अदालत के फैसले के बाद वे सत्यनिष्ठ बने रहे। यह आपने आप में काबिले–गौर है। अब इसी हौंसले को वे आगे बढाएँ यह माँग करें कि वे साधारण नागरिक नहीं है, असाधारण हैं, इसलिए उनकी सजा भी असाधारण होनी चाहिए। उन्हें कम से कम सजा–ए–मौत मिलनी चाहिए और उनके शव को कुत्तों से नुचवाकर लाखों भक्तों के सामने नष्ट किया जाना चाहिए। यदि गुरमीत राम रहीम इतनी हिम्मत कर सकें तो उनकी मृत्यु के बाद वे अमर हो जाएँगे। सारी दुनियाँ के पाखंडी संत–साधुओं के लिए वे एक बेमिसाल मिसाल बन जाएँगे। वे संतों के संत, महासंत कहलाएँगे।

डॉ. वेद प्रताप वैदिक
ईमेल– dr.vaidik@gmail.com

****

काश ! प्रत्येक इन्सान किसी ज़रूरतमंद की ज़िंदगी बदल दे

जीवन में अनेक ऐसे उतार–चढ़ाव आते है जो अनमोल होते है। इन्ही उतार चढ़ावों की वजह से जीवन प्रेरणादायक हो जाते हैं।

डॉ. सुधा मूर्ति एक अत्फत निर्धन परिवार की सदाचारी लड़की थी। अचानक वह लावारिस हो गई। एक दिवस वह बम्बई से बैंगलोर जाती वाली ट्रेन में सीट के नीचे लेटकर सफर कर रही थी। टी.टी. के आने पर पूछताछ में वह सकपका गई। एक अनजान महिला उसके टिकट के पैसे देकर बैंगलोर ले गई और एक अनाथ आश्रम में भर्ती करा दिया। विडम्बना से वह संस्था अच्छे संचालको द्वारा गठित की गई थी। अनाथ लड़की के पढ़ाई आदि का खर्चे वह अनजान महिला काफी लम्बे समय तक वहन करती रही? समय की बदलती सुईयों के साथ उस अनजान महिला का साथ भी छूट गया।

लगभग 15–20 वर्ष उपरान्त वह अनजान महिला, प्रो. उषा, विश्व स्तर के एक सेमीनर में भाग लेने सैनफ्रासिस्को (अमरीका) गई। सेमीनार के उपरान्त वह महिला जब रिसेप्शन पर अपने बिल का भुगतान कर रही थी तो वहाँ पर बैठी परिचारिका ने कहा कि आपके बिल का भुगतान तो आप की बेटी के कर दिया है?

मेरी तो कोई बेटी नही? प्रो. उषा ने पूछा तो जबाब मिला कि सुधा मूर्ति और उनके पति नारायण मूर्ति आपकी बालकोनी में चाय पर प्रतीक्षा कर रहे हैं। प्रो. उषा जब बालकोनी में गई तो एक अति आर्कषक युवा दम्पति ने उषा जी का स्वागत करते हुए कहा कि 20 वर्ष पूर्व आपने एक तेरह साल भी लड़की का बम्बई से बैंगलोर तक का रेल का किराया दिया था और उस लड़की को अनाथ आश्रम में दाखिल कराया था। काफी लम्बे समय तक उसके भरणपोषण और शिक्षा का खर्च भी आपने दिया था। वह लड़की ही आपके सामने खड़ी है। आपकी प्रेरणा से ही मैं इंफोसिस की संस्थापक चैयरमैन की पत्नी हूँ।

काश प्रत्येक मानव जरुरतमंद की मदद कर जिंदगी बदल सकने को तत्पर रहे।

कृष्ण मोहन गोयल
113– बाजार कोट
अमरोहा 244221

****

क्या वेद के सभी मन्त्र बहुवचन में हैं

आर्य जगत् 30 जुलाई, 2017 के अंक में पृष्ठ 8 पर श्री खुशहाल चन्द आर्य कोलकाता का लेख "वेद के ईश्वरीय ज्ञान होने में कुछ प्रमाण" के अन्तर्गत उपशीर्षक 'वेदों के सभी मन्त्र बहुवचन में हैं' प्रकाशित हुआ है जिससे वह सिद्ध करना चाहते हैं कि वेदों के सभी मन्त्र बहुवचन में हैं। परन्तु उनका यह कथन पूर्णतः सत्य नहीं है। ऋग्वेद का पहला ही मन्त्र देखिए–

अग्निमीके पुरोहितम्......।। ऋ. 1 । 1 । 1, **स नः पितेव सूनवे**......।। ऋ. 1 । 1 । 2, **इषे त्वोर्जे**.................।। यजु.। 1।, **अग्न आ याहि**............।। साम. 1 । 1 ।, **उद्बुद्धयस्वाग्ने** .... ।।यजु. 15।54, **शन्नो वातः पवताम्**......।। यजु. 36। 10, **शन्नो अज एकपाद् देवः** ... ।।, ऋ. 7।35।13, **को वः स्तोमं राधति**........ ....।। ऋ. 10।63।6, **ईशा वास्यमिदं सर्वम्** ....।। यजु. 40।1, **कुर्वन्नेवेह कर्माणि**............ ।।यजु. 40।2

वेदों को देखते जाइए, अनेक मन्त्र एक वचन में मिल जाएँगे।

"सभी मन्त्र ईश्वर को सम्बोधित करके लिखे गए हैं।" यह भी सही प्रतीत नहीं होता। **यस्तु सर्वाणि भूतानि आत्मन्येवानु पश्यति।** एतादृश मन्त्र भी अनेक मिल जाएँगे। बस, देखिए और चिन्तन कीजिए।

वेद प्रकाश शास्त्री,
4–ई, कैलाश नगर,
फाजिल्का, पंजाब
मो. 09463428299

****

वेद प्रचार एवं श्रावणी पर्व समारोह सोल्लास संपन्न

आर्य स्त्री समाज मंदिर (बहावलपुर) राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली के तत्वावधान में षट् दिवसीय वेदप्रचार समारोह उल्लासमय वातावरण में संपन्न हुआ। इस समारोह के मुख्य वक्ता आर्य जगत् के प्रख्यात वैदिक विद्वान् आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री ने विशाल जनसमूह को संबोधित करते हुए कहा कि 'श्रवण' सुनने को कहते हैं और 'श्रावण' सुनाने को। संसार की संपूर्ण समस्याओं का एक ही समाधान है – वेदाचार एवं वेद प्रचार। आचार्य श्री ने वेदमंत्र की व्याख्या करते हुए कहा कि हे मनुष्य! 'मनुर्भव' बन, मनुष्य बनने पर तो सारा संसार तेरा परिवार होगा। संसार का ताना–बाना बुनता हुआ भी तू प्रकाश का अनुसरण कर। ज्ञान का लाभ तभी है जब वह अपने आचरण का अंग बन जाये, क्योंकि जानना, जानने के लिए नहीं अपितु कुछ करने के लिए है। समापन दिवस पर आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री द्वारा लिखित 'सफल जीवन के मूल मंत्र' नामक पुस्तक का निःशुल्क वितरण किया गया।

समाज मंत्राणी श्रीमती जनक चुघ एवं आचार्य गवेन्द्र शास्त्री ने सभी का आभार प्रकट करते हुए धन्यवाद किया। आर्य समाज राजेन्द्र नगर के मंत्री श्री नरेन्द्र वलेचा ने सभी विद्वानों का पीत वस्त्र से स्वागत किया। यज्ञब्रह्मा आचार्य अनिल शास्त्री एवं श्रीमती अमृत आर्या ने सुन्दर भजनों की प्रस्तुति की।

डी.ए.वी. कैंट एरिया गया में संस्कृत दिवस

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कैंट एरिया, गया के विशाल सभागार में संस्कृत दिवस समारोह का आयोजन किया गया। जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में मगध विश्वविद्यालय, बोध गया के संस्कृत विभाग के पूर्व विभागाध्यक्ष डॉ. (प्रो.) मुनेश्वर प्रसाद उपस्थित हुए।

संस्कृत दिवस समारोह का शुभारंभ वैदिक मंत्रोच्चार एवं दीप प्रज्ज्वलन के साथ हुआ। उद्घाटन सत्र को सम्बोधित करते हुए विद्यालय के प्राचार्य सह डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, बिहार प्रक्षेत्र, बी के निदेशक डॉ. यू.एस. प्रसाद ने संस्कृत के विषय में उसके विभिन्न मौलिक तत्वों पर विशद् व्याख्यान दिया। डॉ. प्रसाद ने संस्कृत को वैज्ञानिक भाषा बताया।

समारोह में विद्यालय के छात्र–छात्राओं के बीच विभिन्न प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया गया जिसमें लघुनाटिका विभिन्न छन्दों में श्लोकवाचन, वैदिक सूक्तपाठ, वैदिक प्रश्नोत्तरी, गीता का श्लोक वाचन, भाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।

अध्यक्षीय उद्बोधन में मगध विश्वविद्यालय के पूर्व विभागाध्यक्ष डॉ. (प्रो.) मुनेश्वर प्रसाद ने संस्कृत के धार्मिक, सामाजिक एवं साहित्यिक पहलुओं पर विशद् चर्चा की। उन्होंने कहा कि संस्कृत में ही संस्कृति संरक्षित है। संस्कृत की संरक्षण के बिना नैतिक मूल्यों, सामाजिक आधारों एवं मानव मूल्यों की कल्पना भी असंभव है। सम्पूर्ण वांग्मय संस्कृत में ही सन्निहित है। मानव संस्कृति के सम्पूर्ण इतिहास को जानना हो तो संस्कृत का ज्ञान आवश्यक है। संस्कृत ही संस्कार है।

संस्कृत दिवस समारोह के सफल आयोजन में सभी संस्कृत शिक्षकों ने महती भूमिका निभायी। समारोह का समापन धन्यवाद ज्ञापन एवम् शान्ति पाठ के द्वारा सम्पन्न हुआ।

आर्य समाज शकरपुर (दिल्ली) में हुई वेद कथा

आर्य समाज शकरपुर दिल्ली के सभागार में वेद कथा का आयोजन किया गया जिसमें प्रतिदिन देवयज्ञ किया गया । यज्ञ में यजुर्वेद के विशेष मंत्रों से आहुतियां दी गईं। सैंकड़ों व्यक्तियों ने श्रद्धा से धर्म लाभ उठाया।

इस समारोह में पंडित नन्दलाल निर्भय, सिद्धान्ताचार्य, बहीन (पलवल) ने अपने व्याख्यान और भजनों द्वारा योगी राज श्री कृष्ण चन्द्र को वैदिक मर्यादा का सच्चा रक्षक बताया। उन्होंने कहा कि श्री कृष्ण चन्द्र के जीवन का लक्ष्य था धर्मात्माओं की रक्षा तथा पापियों का खात्मा। वे महान योगी के साथ निर्बल निर्धनों के हित चिन्तक थे। उन्होंने अभिमानी और अन्यायी कंस, जरासंध, शिशुपाल जैसे अत्याचारियों का खात्मा किया तथा सीधे सच्चे पांड़वों का पूरी तरह साथ दिया।

श्री नन्दलाल ने कहा– ''आज हम सब को अपने जीवन में योगीराज कृष्ण चन्द्र के सद्गुणों को धारण करके अपना जीवन सफल करना चाहिए। अगर भारत के नेता उनके बताए वैदिक पथ पर चलने लगें तो यह प्यारा महान भारत पुनः संसार का गुरु बन जाएगा।''

समारोह में श्री ओमवीर शास्त्री, दिल्ली, तथा श्री भूदेव शास्त्री, दिल्ली, ने भी वैदिक सिद्धान्तों पर अपने विचारों से श्रोताओं को धर्म लाभ प्रदान किया।

इस उत्सव को सफल बनाने में श्री मिश्रीलाल गुप्ता श्री राकेश शर्मा, आदि अनेक आर्य जनों का विशेष योगदान रहा। शान्ति पाठ एवं प्रसाद वितरण के पश्चात समारोह का समापन किया गया।

आर्य समाज गांधीधाम का 64वाँ वर्षिक अधिवेशन

आर्य समाज गांधीधाम, गुजरात के प्रधान वाचोनिधि वाचोनिधि आचार्य से प्राप्त विज्ञप्ति के अनुसार आर्य समाज के "सेवा तीर्थ" के रूप में जानी जाने वाली आर्य समाज गांधीधाम, गुजरात का 64वाँ वार्षिक अधिवेशन 12 से 14 जनवरी 2018 तक आयोजित किया जा रहा है जिसमें विविध सम्मेलन, गोष्ठियाँ, पुरस्कार वितरण तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जायेगा। प्रातःकाल आध्याक्तिकता से परिपूर्ण यज्ञ पू. नन्दिता शास्त्री एवं पाणिनी कन्या महाविद्यालय वाराणसी की कन्याओं के सानिध्य में होगा। इस अवसर पर साध्वी उत्तमा यति जी एवं पं. कमलेश कुमार अग्निहोत्री की गरिमामयी उपस्थिति कार्यक्रम की शोभा बढ़ायेगी। इस अवसर पर जीवन प्रभात के कुलपिता तथा आर्य प्रतिनिधि सभा अमरीका के भीष्म पितामह श्री गिरीश खोसला के जीवन के 70 वर्ष पूर्ण होने के उपलक्ष्य में विशेष कार्यक्रम होगा। आर्य जनों से प्रार्थना है कि वे इस कार्यक्रम में अधिक से अधिक संख्या में पधारकर धर्म लाभ उठायें। अहमदाबाद से सड़क मार्ग से अथवा रेल मार्ग से गांधीधाम पहुंच सकते हैं। अपने आने की सूचना ईमेल aryagan@aryagan.org पर अवश्य देवें।

Registration No. R.N.I. 39/57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 13/14-09-2017

डी.ए.वी. समाना में हुआ मुफ़्त होम्योपथिक डिस्पेंसरी का उद्घाटन

डी.ए.वी. स्कूल समाना में मुफ़्त होम्योपथिक डिस्पेंसरी का उद्घाटन किया गया। यह उद्घाटन स्कूल के चेयरमैन श्री एच.आर. गंधार (सलाहकर्ता चेयरमैन–डी.ए.वी. सी. एम.सी) की अध्यक्षता तथा डी.ए.वी. स्कूल समाना के सौजन्य से किया गया। इस अवसर पर पंजाब के मुख्य मंत्री कैप्टन अमरिंदर सिंह की धर्मपत्नी एवं पूर्व केंद्रीय विदेश राज्यमंत्री – महारानी परनीत कौर मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित रहीं तथा डॉ. परमजीत सिंह जैसवाल (वाईसचांसलर राजीव गांधी यूनिवर्सिटी ऑफ लॉ) विशेष आमंत्रित अतिथि रहे इस के साथ ही डॉ. तेजिंदर पाल सिंह (चेयरमैन पंजाब होमोपथिक कौंसिल) ने कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। इस अवसर पर पंजाब के गणमान्य व्यक्ति उपस्थित रहे। स्कूल के प्रधानाचार्य डॉ. मोहन लाल शर्मा ने बताया कि विद्यालय में खोली जाने वाली मुफ्त डिस्पेंसरी न केवल बच्चों के लिए है बल्कि समूह इलाका निवासी तथा आस–पास के क्षेत्रों के लोग भी इससे सुविधा ग्रहण कर सकते हैं। यह डिस्पेंसरी डॉ. निर्मल सिंह के निर्देशन में सफलतापूर्वक क्रियान्वित होगी। डॉ. निर्मल सिंह प्रख्यात, अनुभवी एवं रिटायर्ड सरकारी होम्योपथिक डॉक्टर रहे हैं। यह डिस्पेंसरी प्रत्येक शनिवार सुबह 9 बजे से लेकर सायं 4 बजे तक खुली रहेगी तथा समाना बस स्टैंड से बस सुविधा भी प्रदान की जाएगी।

सोहन लाल डी.ए.वी. शिक्षण महाविद्यालय, अम्बाला शहर में अध्यापक दिवस का आयोजन

सोहन लाल डी. ए. वी. शिक्षा महाविद्यालय, अम्बाला शहर में अध्यापक दिवस के अवसर पर छात्र अध्यापकों के लिए रंगारंग कार्यक्रम का आयोजन किया गया। मंच का संचालन डॉ. पूजा ने किया। इस अवसर पर मुख्यातिथि के रूप में श्री जी.एस. नफरा, डी.ई.ओ., अम्बाला थे। महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. विवेक कोहली ने छात्र अध्यापकों को अच्छे शिक्षक बनने के लिए प्रेरित किया। सन्दीप, अनूप, गरिमा, नेहा, विभा, प्रिया, धीरज जैसे भावी शिक्षकों ने कार्यक्रम में अपनी प्रस्तुति के द्वारा चार चांद लगाए। नफरा जी ने शिक्षक के कार्य के महत्व व अच्छा शिक्षक होने के कई प्रंसगों से भावी शिक्षकों को प्रेरित किया व शिक्षक दिवस की बधाई दी। डॉ. नीलम लूथरा ने भी सभी अध्यापकों व भावी छात्र अध्यापकों को अपने शिक्षक कर्म व शिक्षा की ताकत के बारे में बताया व उपस्थित सज्जनों का धन्यवाद किया। इस अवसर पर सभी शिक्षकों डॉ. नरेन्द्र कौशिक, डॉ. नीलम लूथरा, डॉ. सतनाम कौर, डॉ. पूजा, प्रो. पवन कुमार, प्रो. निरूपमा, डा. रूची मनचन्दा, श्रीमती रश्मि, श्रीमती मोनिका, श्रीमती पूजा, सुश्री हिना ने भी सभी विद्यार्थियों को आर्शीवाद दिया और अध्यापक दिवस की शुभ कामनाएं दी।

हंसराज महिला महाविद्यालय जालंधर में नॉन टीचिंग द्वारा मासिक यज्ञ का आयोजन

हंसराज महिला महाविद्यालय जालंधर में नॉन टीचिंग सदस्यों द्वारा सितम्बर महीने के मासिक यज्ञ का आयोजन कॉलेज प्राचार्या प्रो. डॉ. श्रीमती अजय सरीन के दिशानिर्देश में किया गया। मुख्य यजमान प्राचार्या डॉ. श्रीमती अजय सरीन व नॉन टीचिंग सदस्यों ने मिलकर यज्ञ में आहुतियाँ डालते हुए वातावरण को शुद्ध बना 'सर्वे भवन्तु सुखिन' की कामना की। इस अवसर पर प्राचार्या श्रीमती सरीन ने अपने सम्बोधन में स्टॉफ को शारीरिक, मानसिक स्वच्छता के साथ शुभ कर्मों की ओर प्रेरित करते हुए सभी को आर्यजन बनने का आह्वान किया। उन्होंने कहा कि आर्यजन ही डी.ए.वी. के सच्चे सिपाही बनकर राष्ट्र को उन्नति के मार्ग पर ले जा सकते हैं। इस अवसर पर नॉन टीचिंग सदस्य श्री राजीव कुमार ने 'शुभ कर्मों का शुभ फल' विषय पर अपने विचार रखे। तत्पश्चात् सितम्बर मास में जिन सदस्यों का जन्मदिवस आता है प्राचार्या जी ने उन्हें उपहार भेंट कर शुभकामनाएँ दी। शान्ति पाठ के साथ यज्ञ का समापन हुआ। इस यज्ञ में पुरोहित का दायित्व संस्कृत विभागध्यक्ष श्रीमती सुनीता धवन ने निभाया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**